६७ वर्षों से प्रकाशित आध्यात्मिक पुस्तक-माला

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

मन्त्र कल्पतरु पुष्प-१

कौल-कल्पतरु चण्डी

'नाम'-मन्त्र-साधना-सहित

श्रीदुर्गा-शत-नाम
मन्त्र-साधना

श्रीगणेश-नाम मन्त्र-साधना

श्रीशिव-नाम-मन्त्र-साधना

प्रकाशक :
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

भारतवासियों के 'मन' को 'दिव्य भावों' से भरने हेतु 'मन्त्र-शास्त्र' के रहस्यों को सरल-से-सरल रूप में बतानेवाली तीन महान् विभूतियाँ

परम पूज्य
गुप्तावतार 'बाबाश्री'

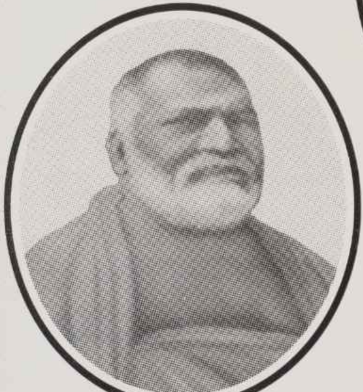

परम पूज्य 'राष्ट्र-गुरु'
श्री स्वामी जी महाराज

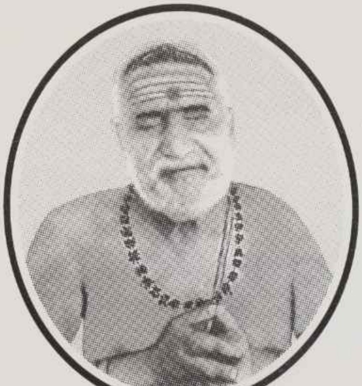

परम पूज्य
'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल

जिनके आशीर्वाद से
'चण्डी'-पुस्तक-माला का प्रकाशन ६७ वर्षों से निरन्तर हो रहा है।

☆

'चण्डी'-पुस्तक-माला का सदस्य बनकर
'मन्त्र-शास्त्र'-सम्बन्धी
प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करें।

विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें

श्रीचण्डी-धाम

अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-०६ ☆ फोन ०५३२-२५०२७८३, ९२३५९१००७१
E-mail : Chandi_dham@rediffmail.com

६६ वर्षों से प्रकाशित होनेवाली शोध-पूर्ण आध्यात्मिक पुस्तक-माला

कौल-कल्पतरु चण्डी

'होली'-
महा-पर्व की
हार्दिक
शुभ-कामनाएँ

'महा-पर्व होली' के पावन अवसर पर विशेष प्रस्तुति

वर्ष ६६ अङ्क ११-१२

मन्त्र-कल्पतरु (पुष्प १)

श्रीगणेश, श्रीदुर्गा एवं श्रीशिव

'नाम-मन्त्र'-साधना-सहित

'होली' के पावन अवसर पर 'मन्त्रों' का आश्रय लेनेवाले साधकों को भगवान् नृसिंह का ध्यान कर उनकी वन्दना करनी चाहिए। यथा–भगवान् नृसिंह माणिक्य-पर्वत-जैसी प्रभावाले हैं और अपने तेज से राक्षसों को भयभीत कर रहे हैं। वे त्रि-नेत्र

हैं और रत्न-जटित आभूषणों से शोभायमान हैं। दो कर-कमल घुटनों पर रखे हुए हैं और अन्य दो कर-कमलों में 'शङ्ख' और 'चक्र' धारण किए हैं। दाँतों द्वारा उग्र-मुख से अग्नि-शिखा के समान जिह्वा बाहर निकली हुई है। दीर्घ केशों से युक्त भगवान् नृसिंह की मैं वन्दना करता हूँ।

इस प्रकार भगवान् नृसिंह की वन्दना करते हुए भीतरी व बाहरी आसुरी प्रवृत्तियों को मन-ही-मन नष्ट करते हुए 'पुराने संवत्' का विसर्जन कर, 'नए संवत्' का दिव्य भावों से परिपूर्ण होकर स्वागत करना चाहिए।

–'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल
मानद सम्पादक 'चण्डी'

अनुदान : ३५/-

'मन्त्रों' को जाग्रत् करने का पर्व—'होली'

- 'मन्त्र'-साधना की दृष्टि से—'होलिकोत्सव' का विशेष महत्त्व है।
- 'होली' के कोलाहल-पूर्ण उल्लास के वातावरण में—साधक 'मन्त्रों' के द्वारा **दिव्य भावों से पूरित** होता है।
- साधक—'होली' की 'महा-रात्रि' में 'सोऽहम्', 'शिवोऽहम्', 'अहं-ब्रह्मास्मि' आदि महा-मन्त्रों की भावना को प्रत्यक्ष करते हुए अपने मन को एकाग्र करता है और जब प्रायः सब लोग सो जाते हैं, तब अपनी साधना में तत्पर हो जाता है।
- 'होली' की पवित्र रात्रि में—'मन्त्र'-साधना से साधकों को **विशेष शक्ति की प्राप्ति** होती है। 'मन्त्रों' को जाग्रत् करने के लिए—'**होलिकोत्सव की रात्रि**' एक श्रेष्ठ अवसर है।

क्ष्रौं

श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः

- '**कशिपु**' का अर्थ है—'**शय्या**'। '**हिरण्य-कशिपु**' का अर्थ है—**स्वर्ण की शय्या**। इस प्रकार '**हिरण्य-कशिपु**'—स्वर्ण अर्थात् धन, बल आदि से उत्पन्न होनेवाला '**महा-मद**' है, जिस पर साधक **सर्व-व्यापी विभु (विष्णु)** के '**नृसिंह**' अथवा '**नृहरि**'-रूप के द्वारा '**होली**' की महा-रात्रि में विजय प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।
- '**होली**' की '**महा-रात्रि**' में प्रायः साधक '**नृसिंह**'-वीज—'**क्ष्रौं**'-**वीज-मन्त्र** का जप करते हैं।
- '**क्ष्रौं**'-**वीज-मन्त्र** में, 'क्ष'—**नृसिंह** अर्थात् मानव-शरीर-धारी धर्म का सूचक है। 'र'—**ब्रह्म** अर्थात् व्यापकता का बोधक है। 'औ'—**ऊर्ध्व-दन्त** अर्थात् उच्च-से-उच्च लक्ष्य के भेदन का द्योतक है और 'ं' विन्दु—**दुःख-हरण** का सूचक है।
- '**क्ष्रौं**'-**वीज-मन्त्र से भगवान् श्रीनृसिंह की पूजा** की जाती है। यथा—'**क्ष्रौं श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः**' कह कर पूजा करनी चाहिए।

'होलिका'-पर्व का महत्त्व

हिन्दुओं का 'होलिका'-पर्व अति प्राचीन पर्व है। 'नव-रात्र', 'दीपावली'-महोत्सवों की भाँति यह भारत-वर्ष में आज भी सर्वत्र मनाया जाता है। 'महोत्सव'-सम्बन्धी धार्मिक शिक्षा के अभाव के कारण आज यह 'पर्व' बहुधा विकृत-रूप में उच्छृङ्खलता-पूर्वक मनाया जाता है। अतः आवश्यकता है कि 'होलिका'-महोत्सव के महत्त्व को हम समझें और विहित अनुष्ठान द्वारा इससे लाभ उठाएँ।

अग्नि-जागरण की मूल-प्रेरणा और 'होलिका'

हिन्दू-धर्म की विविधताओं के कारण विभिन्न प्रदेशों में 'होलिका'-महोत्सव के स्वरूपों में भेद दिखाई देते हैं। कहीं 'होलिका'-महोत्सव को भगवान् श्रीकृष्ण-सम्बन्धी पर्व के रूप में मनाया जाता है और 'होली' को 'पूतना'-ज्वलन माना है। कहीं 'होलिका'-पर्व को श्रीप्रह्लाद की घटना से सम्बन्धित मानते हैं। कुछ लोग 'होलिका'-महोत्सव को महा-देव द्वारा कामदेव का जलन मानते हैं। साधक 'होलिका' को 'महा-रात्रि' के रूप में देखते हैं और अनात्माकार वृत्तियों का लय करने का प्रयत्न करते हैं, जिससे आत्माकार-वृत्ति की स्थिति सु-दृढ़ होती है और 'कुण्डलिनी-शक्ति' का जागरण होता है।

संक्षेप में सभी मतों में 'अग्नि-जागरण' की प्रधानता है। 'अग्नि-जागरण' की मूल-प्रेरणा हमें वेदों से मिली है। 'वेद' कहते हैं–'अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते, अग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति। अग्निर्जागार तमयं सोम आह, तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः।। (ऋग्वेद, ५/४४/१५) अर्थात् ''जिस राष्ट्र की व्यक्तिगत अग्नि अर्थात् उसकी 'उत्साह-शक्ति' और राष्ट्र-गत अग्नि अर्थात् उसकी 'तेज-शक्ति' जाग्रत् होती है, वही राष्ट्र सर्व-सौभाग्यों का अधिकारी होता है।''

शास्त्रों, पुराणों में 'होलिका'

कर्म-मीमांसा एवं पुराणों के अनुसार होलिका-महोत्सव का आरम्भिक नाम 'होलाका' था। महर्षि जैमिनि-कृत 'कर्म-मीमांसा-शास्त्र' में 'होलाकाधिकरण' नामक स्वतन्त्र कर्म-काण्ड का वर्णन है। वात्स्यायन ऋषि ने पारम्परिक उत्सवों-महोत्सवों में 'होलाका' को श्रेष्ठ महोत्सव माना है। हेमाद्रि ने 'होलाका'-पूर्णिमा को 'हुताशनी' कहा है। 'लिङ्ग-पुराण' में फाल्गुन पूर्णिमा को 'फाल्गुनिका' कहा गया है और इसे बाल-क्रीड़ाओं से पूर्ण एवं लोगों को ऐश्वर्य देनेवाली बताया है। 'वराह-पुराण' में इसे 'पटवास-विलासिनी' कहा गया है।

भविष्योत्तर-पुराण (१३२/१/५१) में इस उत्सव के सम्बन्ध में एक कथा दी गई है। महाराज युधिष्ठिर ने भगवान् कृष्ण से पूछा कि फाल्गुन-पूर्णिमा को प्रत्येक गाँव एवं नगर में उत्सव क्यों होता है? प्रत्येक घर में बच्चे क्यों क्रीड़ा-मय हो जाते हैं और 'होलाका' जलाते हैं? 'होलाका' में किस देवता की पूजा होती है? किसने इस उत्सव का प्रचार किया? इसमें क्या-क्या कर्मानुष्ठान होते हैं?

भगवान् कृष्ण ने युधिष्ठिर से राजा रघु की एक कथा कही। राजा रघु के पास लोग यह कहने के लिए गए कि '**ढुण्ढा**' नामक एक राक्षसी बच्चों को दिन-रात डराया करती है और बच्चे उसके उत्पीड़न से सूख जाते हैं। राजा द्वारा पूछने पर उनके पुरोहित ने बताया कि वह मालिन की पुत्री एक राक्षसी है। इसे **भगवान् शिव** ने वरदान दिया है कि उसे देव, मानव आदि मार नहीं सकते और न वह अस्त्र-शस्त्र या जाड़े, गर्मी या वर्षा से मर सकती है। केवल क्रीड़ा-युक्त बच्चों से वह भयभीत हो सकती है।

'होलिका' अर्थात् 'सर्व-दुष्टापह होम'

पुरोहित ने यह भी बताया कि '**फाल्गुन की पूर्णिमा**' को शीत ऋतु समाप्त होती और ग्रीष्म ऋतु का आगमन होता है, तब लोग समुदायों में एकत्रित होकर हँसें एवं आनन्द मनाएँ। बच्चे लकड़ियों के टुकड़े, घास आदि एकत्रित करें तथा बड़े लोग **रक्षोघ्न-मन्त्रों** के उच्चारण-सहित उसमें आग लगाएँ। **प्रज्वलित अग्नि-देव** का सभी लोग तालियाँ बजाकर **स्वागत** करें, **प्रदक्षिणा** करें, हँसें और अपनी-अपनी भाषा में सर्वथा मुक्त होकर **उच्च-स्वर से गायन, अट्टहास, क्रीड़ा** करें। इस प्रकार के '**सर्व-दुष्टापह होम**' से वह '**ढुण्ढा**' राक्षसी भयभीत होकर मर जाएगी।

जब चक्रवर्ती राजा ने '**सर्व-दुष्टापह होम**' का विधि-वत् अनुष्ठान किया, तो '**ढुण्ढा**' राक्षसी मर गई और वह दिन '**होलाका**'-**ज्वलन** के नाम से प्रसिद्ध हो गया। दूसरे दिन **चैत्र की प्रतिपदा** पर लोगों को **होलिका-भस्म को प्रणाम** करना चाहिए, **मन्त्रोच्चारण** करना चाहिए, **घर के प्राङ्गण में वर्गाकार स्थल के मध्य में** '**काम-पूजा**' करनी चाहिए। इससे सम्पूर्ण समुदाय '**रोग**'-**मुक्त** होकर आनन्द से रहेगा।

पुराणों में '**ढुण्ढा**' राक्षसी के अन्य नाम भी मिलते हैं। यथा-'**शीतोष्णा, असृक्या, सन्धिजा, अरुकूण्ठा, होलाका**' आदि। इन नामों के अर्थों का विवेचन करने पर तथा पौराणिक कथानकों के मन्तव्यों पर ध्यान देने से '**ढुण्ढा**' राक्षसी के तात्त्विक स्वरूप का बोध होता है। '**ढुण्ढा**'-शब्द '**ठुण्ठ**'-शब्द का अपभ्रंश है। जिस प्रकार कोई वृक्ष मधु-रसात्मक प्राण-रस से वञ्चित होकर शुष्क हो केवल '**ठुण्ठ**' (ठूँठ) ही रह जाता है, ठीक उसी प्रकार '**ढुण्ढा**' राक्षसी के प्रकोप से **बालकों का शरीर** अर्थात् '**मानव समाज की उत्साह-शक्ति**' सूख कर केवल '**ठुण्ठ**'-सी रह जाती है।

इस प्रकार **मानव समाज की उत्साह-शक्ति** को बचाने के लिए ही हमारे ऋषियों ने '**संवत्सर**' **की समाप्ति** एवं '**नए संवत्सर**' के स्वागत की बेला में '**रङ्ग**'-**वर्षण** और '**राग-रागिनी**'-**मय उत्सव** के रूप में '**सर्व-दुष्टापह अग्नि-प्रज्वलन**' का विधान हमें दिया है। आवश्यकता है कि आज हम उक्त मन्तव्यों को पुनः समझें और पूर्णतया नीरोग बनते हुए **विशेष उत्साह के साथ नवीन संवत्सराग्नि को** धारण करें।

-'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

'होलिका'-दाह : मङ्गलवार, १० मार्च २००९ को भद्रा की समाप्ति रात्रि ९.०८ के बाद।

सूचना : 'चण्डी' वर्ष ६७, अङ्क १-२ मार्च के प्रथम सप्ताह में भेजा जाएगा।

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें : 'श्रीचण्डी-धाम', प्रयाग दूरभाष ०५३२-२५०२७८३

६७ वर्षों से प्रकाशित आध्यात्मिक पुस्तक-माला

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

कौल-कल्पतरु चण्डी

पुष्प-१

'नाम'-मन्त्र-साधना-सहित

मन्त्र-कल्पतरु

योगिराज गुप्तावतार बाबाश्री
'राष्ट्र-गुरु' पूज्य-पाद श्रीस्वामी जी महाराज
'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त जी शुक्ल
'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री
पं० गोविन्द शास्त्री जी दुगवेकर
पं० कन्हैयालाल जी दीक्षित
पं० गोपीनाथ जी कविराज
पं० श्याम शर्मा जी वाशिष्ठ

'श्रीगणेश'-नाम-साधना
'श्रीदुर्गा'-नाम-साधना
'श्रीशिव'-नाम-साधना

प्रकाशक :
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

३५/-

'भारत' का रहस्य

उच्च-से-उच्च स्तर तक विकसित करनेवाली

'मन्त्र-साधना'

संसार के अधिकांश लोगों की दृष्टि में '**भारत**'–रहस्यों का देश है।
प्रश्न उठता है कि '**भारत**' की वह कौन–सी बात है,
जिसके कारण '**भारत**' का इस प्रकार का गौरव माना जाता है?
कोई इसका श्रेय '**भारत**' की '**दार्शनिक विचार-धारा**' को देते हैं, तो
कोई '**भारत**' की '**योग-सम्बन्धी साधनाओं**' अथवा
'**श्रवण-मनन-निदिध्यासन-साक्षात्कार**' आदि बातों को, किन्तु इन सबसे
'**भारत**' के उस विलक्षण रहस्य का पूर्ण उद्घाटन नहीं होता और लोग
'**भारत के रहस्य**' की खोज में बराबर लगे रहते हैं।
परन्तु ऐसा नहीं है कि लोगों को '**भारत के रहस्य**' का अनुसन्धान न मिला हो।
अनुसन्धान तो अनेक अन्वेषकों को मिला है, पर जिन्हें मिला,
उन्होंने उसे नियमानुसार सदा की भाँति गुप्त ही रक्खा है।
जिस क्रिया के करने से मनुष्य–साधारण मानव की स्थिति पार कर जाता है और
उसमें अलौकिक शक्ति आ जाती है,
वही क्रिया '**भारत**' को रहस्यों का देश बनाती है।
वह क्रिया और कुछ नहीं, एक–मात्र '**मन्त्र-साधना**' की क्रिया है, जिससे
मनुष्य **१. धर्म, २. अर्थ, ३. काम, ४. मोक्ष**–इन चारों लक्ष्यों को प्राप्त करता हुआ
उच्च–से–उच्च स्तर तक अपना विकास करने में समर्थ होता है।
'**मन्त्र-साधना**' ही '**भारत**' की अपनी एक विशेष थाती है तथा
इसी पर '**भारत**' के मनीषियों ने विशेष रूप से परिश्रम किया है। अतएव
भारतवासियों को प्राचीन भारत के मनीषियों द्वारा विशेष परिश्रम से प्राप्त
'**मन्त्र-साधना**' **का आश्रय** लेना चाहिए।

श्रीचण्डी–धाम, प्रयाग–०६

–ऋतशील शर्मा

E-mail : Chandi_dham@rediffmail.com

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र

मन्त्र-योग

मन्त्रोपदेश

चिद्-वीज-शक्ति और उसका विस्फोट

मन्त्र-सिद्धि

मन्त्र-दैवत

मन्त्रार्थ-ज्ञान

मन्त्र-तत्त्व

मन्त्र-वीज चैतन्यत्व

अनन्त-वीर्या मन्त्र-शक्ति

मन्त्र-शक्ति, व्यक्ति-प्रार्थना, सङ्घ -प्रार्थना

शब्द-शक्ति, मन

योगिराज गुप्तावतार बाबाश्री

मन्त्र, मन्त्र-योग एवं मन्त्र-सिद्धि का अर्थ

- स्थूल तत्त्वात्मक मानवीय देह में, बुद्धि-रूप पार-दर्शक यन्त्र द्वारा उतरता हुआ, चिद्-काश-युक्त, सूक्ष्म तत्त्व-भाव-निर्मित 'मन'–एक विचित्र रहस्य-मय वस्तु है।
- योग-अनुभवी महा-व्यक्ति, 'मन' को, स्थूल और सूक्ष्म जीवन का 'सन्धि-विन्दु' कहते हैं। कई उसे–'जीवनाङ्ग-तत्त्व' के नाम से भी जानते हैं और कई लोग उसका (मन का) नाम–'विचार-ग्रन्थि' बताते हैं।
- दिव्य पदार्थ 'मन'–बाह्य वस्तुओं का दर्शक तथा व्यक्तित्व का मूल हेतु होने के कारण, मानव-जीवन में प्रत्येक अलौकिक अथवा अभूत-पूर्व शक्ति को उत्पन्न करनेवाला प्रधान यन्त्र है।
- कुछ अनुभवी व्यक्तियों ने–'मन एव मनुष्याणां, कारणं बन्ध-मोक्षयोः' भी कहा है। अर्थात् मनुष्यों के लिए 'मन' ही बन्धन एवं मोक्ष का कारण है।
- मानव जीवन-धारा, सूक्ष्म-तम और स्थूल-तम– इन दो विन्दुओं के बीच विद्यमान भिन्न-भिन्न भोगों अथवा दृश्य-पटलों के मध्य प्रवाहित होती है। जीवन-धारा के विभिन्न पड़ावों पर व्यक्ति भिन्न-भिन्न दृश्य-पटलों के दर्शन के साथ ही चिद्-काश, विवेक-बुद्धि-सहित 'मन' के चारों ओर सत-रज-तम-मय चिद्-ऊर्मियों एवं पूर्व-सञ्चित कर्म-ऊर्मियों का द्रष्टा भी बनता है।
- जैसे 'रेडियो'-यन्त्र विद्युत् के रूप में शब्द को फिराकर उनको पुनः उसी प्रकार शब्द-रूप में बाहर निकालता है, वैसे ही रहस्य-मय 'मन', दृष्टा से दर्शन के भाव ग्रहण कर, उनको नाना प्रकार के विचारों के रूप में बाहर निकालता है और नए-नए विचारों से बाँध देता है।
- मनो-विज्ञान के वैज्ञानिकों ने 'मन'-रूपी रहस्य-मय तत्त्व का नाम 'विचारों की गठरी' रक्खा है। यह गूढ़ रहस्य-मय 'मन'-तत्त्व, व्यक्ति की तमाम शक्तियों का 'जनन-केन्द्र' और प्रत्येक प्रकार के विचार-स्फुरण का मूल यन्त्र होने के कारण, व्यक्ति के जीवन की उन्नति का प्रधान हेतु है।
- मनुष्यों के लिए, दिव्य गुण-मय उच्च सत्त्व-भाव में या अन्धकार-मय तमो-भाव में चढ़ने-उतरने के लिए 'मन' एक रहस्य-मय सीढ़ी है।
- प्रत्येक व्यक्ति 'उन्नति' और 'आनन्द' चाहता है। 'आनन्द की छाया' तथा नाना प्रकार की भ्रम-मय प्रतिच्छायायों को 'मन' के चारों ओर बहते हुए देखकर व्यक्ति–'प्रलोभन' में पड़ जाता है और उन्हें पकड़ने के लिए हवा में हाथ फैलाकर पाने की कोशिश करता है, लेकिन कुछ भी उसके हाथ नहीं आता। इसी फेर में व्यक्ति नाना प्रकार के 'दुःख-सुखादि' का अनुभव किया करता है और 'भोग', 'स्वार्थ' तथा तत्-जनित क्रिया से उत्पन्न 'कर्म-जाल' में फँस कर–१. प्रारब्ध, २. सञ्चित और ३. क्रिय-माण–इन तीन डोरों से घिसा-कटा करता है। इन सारी आपत्तियों का कारण–'मन' है। अतएव 'मन की साधना' ही उपर्युक्त आपत्तियों पर विजय प्राप्त करने का एक-मात्र मार्ग है।

- जैसे एक गति-मय एञ्जिन को हस्तगत कर उसे रोकने अथवा अपनी इच्छा के अनुसार चलाने के लिए 'ब्रेक' की जरूरत रहती है, वैसे ही '**मन**'-रूपी यन्त्र से प्रेरित विचारों को दिशा-निर्देश की जरूरत पड़ती है।
- **मनो-चाञ्चल्य** के कारण अथवा **जीवन-धारा में क्षण-क्षण बदलते गुण-भेद** से, '**विचार-लक्ष्य**' भी तीव्र गति से समय-समय पर बदलते हैं। इससे **एक लक्ष्य का विचार-प्रवाह**, जीवन-धारा में स्थिर नहीं रह सकता और जीव नए-नए लक्ष्यों में बहता हुआ, **नई-नई कर्म-सृष्टियों के जाल** में फँसकर बराबर दुःख पाता है। अतः '**विचार-प्रवाह**' को एक समान रीति से क्रमशः उच्च-से-उच्च लक्ष्य पर स्थिर करने की अत्यन्त आवश्यकता है।
- '**विचार**' जब किसी-न-किसी प्रकार की '**अन्तर्ध्वनि**' या '**अन्तः-शब्द**' या '**अन्तः-लक्ष्य**' से सम्बन्ध रखते हैं, तब वे '**मन**' को विशिष्ट प्रकार से दिशा-निर्देशित करते हैं और संस्कृत-भाषा में ऐसे '**विचारों**' को '**मन्त्र**' कहते हैं।
- '**विचार-प्रवाह**' को इच्छित काल तक, एक समान रीति से उच्च-से-उच्च लक्ष्य में स्थिर कर सकने के अभ्यास-क्रम को '**मन्त्र-योग**' कहते हैं। साथ ही इस तरह के अभ्यास-क्रम के अमुक सीमा-पर्यन्त सिद्ध होने के भाव को '**मन्त्र-सिद्धि**' कहते हैं।
- '**मन्त्र-सिद्धि**' को इच्छानुसार खर्च करके अभ्यासी व्यक्ति, विश्व-समाज में अलौकिक शक्तियाँ दिखा कर, **इच्छित सम्मान** और **श्रेयत्व** पा सकता है, परन्तु **तत्त्व-भेद** से खर्च होती हुई यह **विचार-शक्ति**, तब व्यक्ति की उन्नति या अवनति में उत्तम-रूप से साह्य-कर अथवा भयङ्कर रूप से विक्षेप-कर भी हो जाती है।
- '**मन्त्र**'-रूप विचार-शक्ति जब **प्रभु-चिन्तन, आत्मानुभव** अथवा **दिव्येश-गुण-मनन** में स्थिर होती है, तब **श्रेयत्व, ईश्वरत्व** या **महत्**-पद-प्राप्ति में साह्य-कर होती है। इसके विपरीत **विचार-शक्ति** जब **मारण, मोहन, वशीकरणादि** '**षट्-कर्म**' में खर्च होती है अथवा **शापादि का भय देकर महत्त्व, श्रेयत्व आदि प्राप्ति का प्रयत्न** करने में खर्च होती है, तब यह शक्ति **भयङ्कर तम** से आवृत्त होकर, **कर्त्ता का अधः-पतन** करती है।
- **प्रभु-चिन्तन, आत्मानुभव, दिव्येश-गुण-मनन** में स्थिर विचार-शृङ्खला को '**योग**' द्वारा निरोधित '**मन**' में फैलाकर, **एकान्त आत्म-भाव** उत्पन्न कर, उसमें '**मन**' को एकाग्र करने की प्रक्रिया को '**मन्त्र-योग-सिद्धि**' कहते हैं। दृढ़ विचार द्वारा इस अनन्त लक्ष्य को सदैव सम्मुख रखनेवाले अभ्यासी '**जीवन-मुक्त**' कहलाते हैं।
- '**मन्त्र-साधना**'-व्यक्तियों को **श्रेय मार्ग** पर ले जानेवाली प्रमुख साधना है। युक्त रीति से '**मन्त्र-जप**'-व्यक्ति के **कल्याण का प्रधान हेतु** है और **दिव्य गुण-तत्त्व-चिन्तन** तथा **सतत मनन** से, '**मन्त्र**'-ध्याता को **ध्येय-रूप** बना देने में समर्थ होता है।

- **'मन्त्र-योग'–मनो-निवृत्ति का एक सरल-तम-उपाय है। इसमें विचार, धारणा** तथा **तीव्र मनन** की प्रधानता होती है।
- वर्तमान काल में **'मन्त्र-जप'** करनेवाले साधक प्रायः विफल होते हैं, कारण उन्हें **मार्ग-युक्त दिशा का ज्ञान** नहीं होता अथवा **मन्त्र के सत्य-रहस्य** से वे अनभिज्ञ होते हैं।

मन्त्र, मन्त्रोपदेश, मन्त्रार्थ-ज्ञान, मन्त्र-दैवत, मन्त्र-तत्त्व एवं मन्त्र-वीज-चैतन्य

- **अग्नि** का प्रभाव लौह में रुकने से जैसे लौह अङ्गार का गुण धारण कर लेता है, **विद्युत्-प्रवाह** के शलाका (वायर) में उतरने से शलाका जैसे विद्युन्मय शक्ति बन जाती है, वैसे ही **'मनो-शक्ति'** के विचार में स्थिर होने से वह **विचार-मय** हो जाती है। यहाँ तक कि स्वतः विचार का ही रूप बन जाती है।
- **'मन्त्र'**-शब्द का अर्थ ही है–**विचार**। इस प्रकार का विचार, जिसके **जप** या **रटन** द्वारा वह **मन** में स्थिर हो जाए। जिससे **मन**–उन्नत होकर अपने उच्च ध्येय में स्थिर हो, उसको **'मन्त्र'** कहते हैं। **मन** द्वारा साधक अपने **उपास्य देव** की याद करता है।
- कान फूँकना–**'मन्त्र'** नहीं है। **विचार का ग्रहण करना** ही–**'मन्त्र'** है। अनुभवी लोग, जिन्होंने अध्ययन किया है, बताते हैं कि उत्तम मार्ग में प्रवृत्त होकर जिससे साधक अपनी आत्मा को उन्नत कर स्थिर हो सके, वह **'मन्त्र'** है। उत्तम मार्ग-दर्शन करानेवाला है–**'गुरु'** और जिसको गुरु बताता है, वह है – **'शिष्य'**। साधक विचार करता हुआ, जप करता हुआ जिस लक्ष्य से उत्तम मार्ग पर स्थिर हो सके, उसका उपदेश करना ही है–**'मन्त्रोपदेश'**।
- जगन्नियन्ता प्रभु–अमुकामुक **अनन्त भाव-मय महा-गुणों से परिपूर्ण** हैं। **'मन'** की एकाग्रता से निर्मित शून्य में, **प्रभु के भाव-मय महा-गुणों से परिपूर्ण लक्ष्य का विचार-भाव** भरने की क्रिया को **'मन्त्रार्थ-ज्ञान'** कहते हैं।
- **प्रभु के अनन्त भाव-मय महा-गुण** जिस **नाम**, **रूप**, **ध्यान** एवं **लक्ष्य** में कल्पित होते हैं, उसे **'मन्त्र-दैवत'** कहते हैं।
- विचार-प्रवाह–तत्त्व से परे नहीं हो सकता। **अन्तःशब्द-प्रवाह** में किसी-न-किसी रूप के अमुकामुक सूक्ष्म तत्त्व अवश्य होते है। अतः अपने लक्ष्य के अनुरूप **अमुक रूप के तत्त्व के प्रधानत्व** को ध्यान में रखने के प्रयास को **'मन्त्र-तत्त्व'** कहते हैं।
- साधक के अभीष्ट भाव में, **मनो-निग्रह** द्वारा उत्पन्न होते हुए शून्य में विचरनेवाली **दिव्य रश्मियों (कास्मिक रेज)** के दबाव से, **'मन्त्र-वीज'** (उपास्य देव की क्रिया का वर्णन) जब विस्फुटित होकर एक विचित्र प्रकार की शक्ति–**'चिच्छक्ति'** में परिणत हो जाता है, तब परमा **'चिच्छक्ति'** आत्मा में क्षण मात्र में फैल जाती है और उसमें से **ध्यानार्थ-मय** जो **भाव-मूर्ति** उत्पन्न होती है, उसको ही **'मन्त्र-चैतन्य'** कहते हैं।

- 'चिच्छक्ति' को ही 'लिङ्ग', 'योनि', 'नारायण', 'कृष्ण', 'अव्यक्त' आदि नाम से जानते हैं। 'योनि' आदि गुह्य नाम-रूपी 'चिच्छक्ति' के दिव्य-भाव को मन में धारण करने की क्रिया को 'योनि-मुद्रा' कहते हैं।
- इष्ट-दैवत के एकाग्र मनो-भूमिका के आधार पर एवं ध्यान तथा बारम्बार वीजोच्चार के सूक्ष्म दबाव से, 'मन्त्र-वीज' विस्फुटित होता है और साधक को 'अमोघ अणिमादि सिद्धि-शक्ति' का देनेवाला होता है।
- सतत ध्यान तथा शब्द-शक्ति (जो गति-संयोग से तैजस रूप में परिणत हो जाती है) के सङ्घर्षण से वीज (मन्त्र) विस्फुटित होता है और उससे साधक में ध्येय लक्ष्य की अद्भुत शक्ति उत्पन्न होती है। शब्द-वीजाणु के विस्फोट के इस विधान को ही 'मन्त्र-सिद्धि' कहते हैं।
- 'मन्त्र-सिद्धि' से साधक को प्रकृति-जन्य अनेक सिद्धियाँ हस्त-गत हो जाती हैं, जिससे साधक इष्ट-रूपी ध्येय में स्थिर होकर चारों पदार्थ (१. धर्म, २. अर्थ, ३. काम और ४. मोक्ष) का भोक्ता होता है। साधक को इस स्थिति में भव-प्रत्यय (सांसारिक सुख-लालसा) के समान सिद्ध्यादि के प्रलोभनों से भी अत्यन्त सावधानी-पूर्वक बचना चाहिए।
- 'मन्त्र' द्वारा वर्णित 'दैवत' अथवा 'मन्त्र' में स्थित 'चैतन्य-शक्ति' को 'ध्येय दैवत' कहते हैं और 'ध्येय दैवत' के 'क्रिया-चक्र' का नाम 'यन्त्र' कहलाता है। मान्त्रिक इसे 'इष्ट-गृह' भी कहते हैं। मन्त्र की सिद्धि द्वारा 'ध्येय दैवत' को प्राप्त करने के विधान को 'तन्त्र' कहते हैं।
- 'मन्त्र-सिद्धि' का भेद वर्षों से गुप्त रहा है तथा वह गुरु-मुख से ही प्राप्त होता आया है। बिना गुरु-कृपा (पुस्तक में पढ़कर जप करने से) किसी भी 'मन्त्र' की झाँकी-'सिद्धि' नहीं मिलती। यह ग्रन्थों में बार-बार कहा गया है। इसका कारण यह है कि 'वीज' (मन्त्र) का विस्फोट-विधान, जो प्रत्येक 'मन्त्र' की सिद्धि का मूल कारण है, किसी तन्त्रकार ने नहीं बताया है। यह विधान परम्परा से गुरु के द्वारा ही ज्ञात होता आया है। 'काल-चक्र' के फेर से आज इस विधान को बतानेवाले 'गुरु' भी क्वचित् ही हैं। यही कारण है कि इस परम साधना-कला का आज विश्व में ह्रास-सा हो गया है।

'मन्त्र' अर्थात् 'चिद्-वीज-शक्ति' और उसका विस्फोट

- प्रकृति की वह 'शक्ति', जो किसी भी प्रकार के परिवर्तन में नाना प्रकार की जीव-कोटियों का संरक्षण कर उनका पुनरुद्भाव करती रहती है और एक चक्र के पूरे होने पर दूसरा चक्र उसी के गर्भ में से प्रारम्भ करती है, विश्व की 'वीज-शक्ति' कहलाती है। रासायनिक परिर्वतन से 'जीवाणु' बन सकता है, परन्तु 'वीजाणु' नहीं बन सकता। 'वीजाणु' की उत्पत्ति-'गर्भाग्नि' में ही हो सकती है, अन्यत्र नहीं। द्वित्व को गला कर, एक कर, उस एक में से पुनः दो और सहस्रों करोड़ों की उत्पत्ति करने की सत्ता एक-मात्र 'गर्भाग्नि' में ही है। रज और पराग का एकीकरण गर्भ के सिवा अन्यत्र नहीं होता।

- जो अग्नि '**वृक्ष**' अथवा माता-पिता में से '**वीज**' को बनाती है, वही उसका '**विस्फोट**' करती है। जला हुआ '**वीज**' उग नहीं सकता। '**वीज**' पर किसी भी प्रकार की जबर्दस्ती करने से वह नहीं उगता। उसे मात्र सिञ्चन की जरूरत होती है। '**पशु-सृष्टि**' में एक पशु का '**वीज**' (रज-वीर्य-सम्मिलन) दूसरे पशु के गर्भ में नहीं उगेगा। यदि एक कोटि के पशु के रज और वीर्य का मिश्रण शुद्ध नमक के घोल में रखा जाए, तो वह थोड़ी देर जीवित रहकर मर जाएगा। यदि उसे किसी भी गर्भ में डाला जाए, तो भी वह नहीं जिएगा। उसे जीवित रख, उसमें से **जीवन का विकास** करने के लिए पाँच बातें आवश्यक होती हैं– (१) उसको उसी पशु के गर्भ में स्थापित करना चाहिए, जिस जाति का वह हो। (२) वीज को गर्मी पाकर फटना चाहिए। (३) उसमें से गर्भाशय में जड़ जमनी चाहिए और रक्त उसमें चूसा जाना चाहिए। (४) रक्त चूसा जाकर, उसका निकास भी गर्भाशय की रक्त-नलिका द्वारा होना चाहिए। (५) उसे युक्त समय पर थैली के फटने पर बाहर आना चाहिए। इसमें अनुकूलता न होने से मृत का ही जन्म होगा या जन्म पाते ही मर जाएगा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि '**वीज**' की उत्पत्ति स्वयं एक **विस्फोट** से होती है। उत्पत्ति के बाद गर्भ में फिर '**वीज**' फटता है, जिससे वह गर्भ में अपनी जड़ जमाकर अपने आस-पास अपनी '**आकृति**' बना सकता है और अन्त में '**गर्भ**' के फटने से '**वीज**', '**गर्भ**' के बाहर आकर '**विश्व-दर्शन**' का अधिकारी होता है। इस प्रकार '**वीज**' का तीन बार '**विस्फोट**' होता है।
- '**वीज**'-**विज्ञान** के उक्त नियमों के अनुरूप ही '**मन्त्र-साधना**' के अन्तर्गत **शून्य-रूपी गर्भ** में, किसी '**प्रकम्पन**' के साथ, **अर्थ-रूपी चित्** के सम्मिलन से '**वीज**' उत्पन्न होता है। इस प्रकार साधक दो वस्तुएँ अपने **शून्य** में एकत्र करता है–१. '**प्रकम्पोर्मि**' और २. '**मन्त्रार्थ**'। यही दोनों मिलकर '**वीज**' बन जाते हैं। '**शून्य**' (गर्भ) में '**वीज**' का फिर दूसरी बार '**विस्फोट**' होता है, जो उसे '**शून्य**' के अन्दर उसका आकार बनाकर पोषित करता है। तीसरे '**विस्फोट**' में '**शून्य**' (गर्भ) के फटने पर वह बाहर आता है। इसी को '**मन्त्र-दर्शन**' कहते हैं। जिस प्रकार बालक की प्रथम क्रिया साँस लेने के प्रयत्न में रो पड़ना, चिल्लाना, चीत्कार आदि हैं, उसी प्रकार '**मन्त्र**' अर्थात् '**चिद्-वीज**' की '**शून्य**' से बाहर प्रथम क्रिया–'**वरदत्व**' है।
- संसार की सारी शक्ति को '**मन्त्र**' अपने में निहित रखते हैं। देखनेवाले को '**मन्त्र-शक्ति**' की पहचान नहीं हो पाती। गाय को जिस तरह देखकर कोई भी यह नहीं कह सकता कि इसमें घृत एक ऐसी शक्ति है, जिससे इसकी (गाय की) कमजोरी तो दूर हो ही जाएगी, संसार के जो प्राणी इसके घृत का सेवन करेंगे, व्यवहार करेंगे–उनके शरीर भी पुष्ट होंगे तथा मानसिक शक्ति परिपुष्ट होगी।

अनन्त-वीर्या 'मन्त्र-शक्ति'

- '**मन्त्र-शक्ति**'–'**साधना**' द्वारा प्रकट होती है। '**साधना**' से ही '**मन्त्र**' की **आन्तरिक शक्ति** प्रकट होती है। जिस तरह गाय का पालक अपनी क्रिया, प्रक्रिया द्वारा गाय की सेवा करके दूध प्राप्त करता है। फिर उस दूध से क्रियाओं के द्वारा घृत, मक्खन आदि प्राप्त करता है। उसी तरह साधक '**मन्त्र**'-**साधना** से उत्तरोत्तर शक्ति पाता है, जिससे स्वयं तो चमत्कृत होता ही है, संसार को भी चमत्कृत कर देता है।

✦ **'मन्त्र-शक्ति'–विश्व के कल्याण के लिए है।** विश्व के मानव अपनी साधना द्वारा इनसे लाभान्वित होते रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे। **विश्व के कल्याण का बीज–'मन्त्र-शक्ति'** में समाहित है।

✦ **उच्च विचार एवं भाव-रूपी 'मन्त्र'** की उपासना से, साधना से और प्रयोग से **अखिल विश्व का कल्याण** होता है। **'मन्त्र-शक्ति'** को **विश्व-जननी की शक्ति** कहा गया है। **भारत-वासी** इसे **'अनन्त-वीर्या वैष्णवी-शक्ति'** कहते हैं। इसका सङ्केत करते हुए **महर्षि वेद-व्यास** ने मार्कण्डेय पुराण में (श्रीदुर्गा-सप्तशती में) कहा है–

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त-वीर्या, विश्वस्य वीजं परमाऽसि माया।
सम्मोहितं देवि! समस्तमेतत्, त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति-हेतुः।।

अर्थात् हे **देवि!** तू ही **अनन्त शक्ति** है। **सम्पूर्ण विश्व का वीज** तू ही है। विश्व की **परमा माया** तू ही है। तुमने ही समस्त संसार को अपनी शक्ति से मोहित कर रखा है। तुम्हारे प्रसन्न हो जाने पर ही इस पृथ्वी पर प्राणियों को **सांसारिक बन्धनों से मुक्ति** मिल पाती है, इसलिए तू ही इस **संसार में मुक्ति का कारण** भी है।

मन्त्र-शक्ति, व्यक्ति-प्रार्थना और सङ्घ-प्रार्थना

✦ देह-मनादि की उत्तेजना में व्यक्ति को **'कम्प'** का अनुभव होता है–यथा **अति-काम, अति-क्रोध, अति-मोह, अमुकामुक रक्त-विकार, वात-व्याधि** आदि में। **शारीर विज्ञान** के पण्डित डाक्टरों का मत है कि मस्तिष्क की अमुकामुक सूक्ष्म शिराओं की क्रिया में, अमुकामुक कारणों से विक्षेप उत्पन्न होने पर इस प्रकार के रोग होते हैं। **रस-शास्त्र** के ज्ञाता **दाह-कम्प-मूर्च्छा** आदि को **'अति-काम'** अथवा **'अति-प्रेम'** का लक्षण बताते हैं। इन सब पर मनन करने से यह ज्ञात होता है कि–**'कम्प'** अति उत्तेजित **'मन'** की किसी स्थिति में मानवीय देह में उत्पन्न होता है। यह भी अनुभव होता है कि **'कम्प'–'मन'** से **'प्राण'** में और **'प्राण'** से **'देह'** में उतरता है।

✦ **प्राकृतिक तत्त्व-विज्ञानी** बताते हैं कि **गति**-वत् **'कम्प'**–विश्व की एक अनादि क्रिया है, जो प्रत्येक प्रकार की **गति** में से उत्पन्न होती है। अतः जो **गति** का कारण है, उसे **'कम्प'** का भी कारण होना चाहिए।

✦ **'शब्द'** की **गति** से ही बाह्य वातावरण में **'कम्प'** उत्पन्न होता है। **'कम्प'** की तीव्रता गति-शक्ति पर निर्भर होती है। एक साधारण व्यक्ति द्वारा उत्पन्न **'शब्द-कम्प'** या **'विचार-कम्प'** की अपेक्षा एक जन-सङ्घ द्वारा एक ही प्रकार के **'शब्द'** या एक ही प्रकार के विचारों से उत्पन्न **'कम्प'** में कहीं अधिक शक्ति होती है। इस प्रकार उत्पन्न हुई शक्ति बहुधा सङ्घ-**व्यक्तियों के कल्याण का कारण** बन जाती है। इसीलिए **'व्यक्ति-प्रार्थना'** से **'सङ्घ-प्रार्थना'** विशेष हितकर कही गई है।

✦ व्यक्ति अथवा सङ्घ द्वारा किए गए मन्त्र-जप अथवा ईश-प्रार्थना अथवा सद्-विचारों से जो '**प्रकम्प**' उत्पन्न होते हैं, वे '**कम्प**'–**विश्व-गति** के नियमानुसार (कम्प उत्पन्न करनेवाले व्यक्तियों की शक्ति के प्रमाण में) **वर्तुल गति** पाकर ऊपर जाते हैं और फिर ऊपर से '**कम्प**'–प्रेरक व्यक्तियों के ऊपर उतरता है। इसी को लोग **देवताओं का आशीर्वाद** मानते हैं।

शब्द-शक्ति और मन

✦ **शब्द–आकाश-तत्त्व** अर्थात् **शून्य का गुण** है। शून्य में, मूल-गति में से उठनेवाली अमुकामुक **गति-शक्तियों** की विरुद्ध दिशाएँ जब पारस्परिक सङ्घर्षण का कारण बन जाती हैं, तब '**शब्द**' प्रकट होता है और सङ्घर्षण से उत्पन्न यही '**शब्द**', स्फुरित होकर पुनः **गति** में आता है, जिसे '**मन**'–'**कर्ण-नाद**' के द्वारा ग्रहण करता है।

✦ '**शब्द**' की **कर्ण-नाद** अवस्था को मात्र **प्रणवानुमान** में **बाह्य शब्द**-रूप से प्रकट कर सकते हैं। यथा–मूल शब्द '**अ**'-**कार** गति में आने से '**उ**'-**कार** और प्रस्सरण के हेतु से लयात्मक बिन्दु-भाव '**म्**'-**कार** होकर '**अ+उ+म्**'='**ॐ**'–यह शब्द विद्वज्जगत् में '**प्रणव**' के नाम से पहचाना जाता है। यहाँ '**अ**'-**कार**–शब्दों में व्यापक होने से **रजात्मक** माना जाता है क्योंकि उसमें **अन्य शब्द को उत्पन्न करने की शक्ति** होती है। '**उ-कार**' में **गति-मय स्थिरता** का जो भान होता है, वह **सत्त्व की भावना** को व्यक्त करता है। उसमें **शब्द** की–**जीवन को पोषण देने की शक्ति** स्पष्ट रूप से दिखती है। **गति-जनित शब्द** '**म्**'–प्रसरित शब्द को **कर्ण-मात्रा** से पृथक् करता है। इसलिए उसे **लयात्मक** मानते हैं और उसमें **तम-दैवत् की धारणा** व्यक्त होती है। अतः इस मूल व्यापक '**शब्द-मन्त्र**' को '**त्रि-गुणात्मक शब्द-ब्रह्म**' नाम से मन्त्र-विज्ञान बताता है।

✦ '**मन**'–**जीवन की शक्ति का गुण** है, **तन्मात्राएँ**–उसके '**शस्त्र**' हैं, **बुद्धि**–धनुष है, विषय या **सुखेच्छा**–'**वेध-बिन्दु**' है, **अहङ्कार**–'**प्रेरक**' और **चित्त**–'**साक्षी**' है। चित्त में से **जीवन-शक्ति** स्फुरित होती है और **चिद्-वस्तु** को **व्यापक चैतन्य-रूप** माना जाता है। **मानने की शक्ति** को '**मन**' कहते है।

✦ **गति-शक्ति**-जनित जो **मूल-शब्द**–'**अवकाश**' में व्याप्त है, वह **मूल-शब्द**–'**चिद्-शक्ति**' के आधार से, **बुद्धि** को धारण कर, '**मन**' में **जीवन-शक्ति** प्रेरित करता है और '**मन**'–**तन्मात्राओं** में खिंचता है। यही कारण है कि **शब्द** में अमुकामुक मात्रा में '**मन**' की **विचित्र गति** को स्तम्भित कर **शब्दज-भावनावाले मार्ग** में रोक देने की अथवा खींचे जाने की शक्ति होती है।

✦ '**स्वराणां साम्य-प्रवाहो सङ्गीतं**' अर्थात् **स्वरों के साम्य-प्रवाह** का नाम ही **सङ्गीत** है। '**मन**' और '**शब्द-स्वर**' के बीच अनूठा आन्तरिक सम्बन्ध होता है। **शब्द** या **स्वर–गति** द्वारा '**मन**' में **जीवन-शक्ति** का सञ्चार करते हैं।

- शब्दों और स्वरों में 'मन' को स्तम्भित करने की शक्ति तभी होती है, जब शब्द या स्वर-समत्व-पूर्वक 'मन' में प्रवेश करते हैं।
- शब्द या स्वर के दो अङ्ग हैं–१. सम और २. विषम। 'सम-भाव'–एकाग्रता को और 'विषम-भाव'–विकार को पैदा करता है।
- सङ्गीत में स्वरों का समत्व-मय प्रवाह होता है। इसलिए उसमें 'मन' को एकाग्र करने की या आनन्द देने की शक्ति होती है।
- सङ्गीत जिस भावना से युक्त होता है, उसी जाति की भावनाओं में 'मन' खिंचता है। यदि भावना-विषयासक्त होती है, तो विषय की तीव्रता बढ़ती है। यदि भक्ति-युक्त होती है, तो 'इष्ट' की भाँति 'मन' को तद्-रूप होने में सहायता देती है।

मनन करने योग्य बातें

'मन'–बाह्य वस्तुओं का दर्शक तथा व्यक्तित्व का मूल हेतु होने के कारण, मानव-जीवन में प्रत्येक अलौकिक अथवा अभूत-पूर्व शक्ति को उत्पन्न करनेवाला प्रधान यन्त्र है।

❀ ❀ ❀

मनुष्यों के लिए, दिव्य गुण-मय उच्च सत्त्व-भाव में या अन्धकार-मय तमो-भाव में चढ़ने-उतरने के लिए 'मन' एक रहस्य-मय सीढ़ी है।

❀ ❀ ❀

'मन की साधना' ही आपत्तियों पर विजय प्राप्त करने का एक-मात्र मार्ग है।

❀ ❀ ❀

'विचार' जब किसी-न-किसी प्रकार की 'अन्तर्ध्वनि' या 'अन्तः-शब्द' या 'अन्तः-लक्ष्य' से सम्बन्ध रखते हैं, तब वे 'मन' को विशिष्ट प्रकार से दिशा-निर्देशित करते हैं।

❀ ❀ ❀

'विचार-प्रवाह' को इच्छित काल तक, एक समान रीति से उच्च-से-उच्च लक्ष्य में स्थिर कर सकने के अभ्यास-क्रम को 'मन्त्र-योग' कहते हैं। साथ ही इस तरह के अभ्यास-क्रम के अमुक सीमा-पर्यन्त सिद्ध होने के भाव को 'मन्त्र-सिद्धि' कहते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र'-रूप विचार-शक्ति जब प्रभु-चिन्तन, आत्मानुभव अथवा दिव्येश-गुण-मनन में स्थिर होती है, तब श्रेयत्व, ईश्वरत्व या महत्-पद-प्राप्ति में साह्य-कर होती है।

❀ ❀ ❀

मनन करने योग्य बातें

प्रभु-चिन्तन, आत्मानुभव, दिव्येश-गुण-मनन में स्थिर विचार-शृङ्खला को 'योग' द्वारा निरोधित 'मन' में फैलाकर, एकान्त आत्म-भाव उत्पन्न कर, उसमें 'मन' को एकाग्र करने की प्रक्रिया को 'मन्त्र-योग-सिद्धि' कहते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-साधना' व्यक्तियों को श्रेय मार्ग पर ले जानेवाली प्रमुख साधना है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-जप'-व्यक्ति के कल्याण का प्रधान हेतु है।

❀ ❀ ❀

सतत मनन से, 'मन्त्र'- ध्याता को ध्येय-रूप बना देने में समर्थ होता है।

❀ ❀ ❀

जिससे मन उन्नत होकर अपने उच्च ध्येय में स्थिर हो, उसको 'मन्त्र' कहते हैं।

❀ ❀ ❀

उत्तम मार्ग में प्रवृत्त होकर जिससे साधक अपनी आत्मा को उन्नत कर स्थिर हो सके, वह 'मन्त्र' है।

❀ ❀ ❀

साधक विचार करता हुआ, जप करता हुआ जिस लक्ष्य से उत्तम मार्ग पर स्थिर हो सके, उसका उपदेश करना ही है-'मन्त्रोपदेश'।

❀ ❀ ❀

'मन' की एकाग्रता से निर्मित शून्य में, प्रभु के भाव-मय महा-गुणों से परिपूर्ण लक्ष्य का विचार-भाव भरने की क्रिया को 'मन्त्रार्थ-ज्ञान' कहते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-वीज' विस्फुटित होकर एक विचित्र प्रकार की शक्ति में परिणत हो जाता है और उसमें से ध्येय की भाव-मूर्ति उत्पन्न होती है।

❀ ❀ ❀

सतत ध्यान तथा शब्द-शक्ति के सङ्घर्षण से वीज (मन्त्र) विस्फुटित होता है और उससे साधक में ध्येय लक्ष्य की अद्भुत शक्ति उत्पन्न होती है।

❀ ❀ ❀

संसार की सारी शक्ति को 'मन्त्र' अपने में निहित रखते हैं।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र-योग

मन्त्र का रहस्य

मन्त्रों के जप का रहस्य

मन्त्रों की जन्मदात्री शब्द-शक्ति का रहस्य

बीज-मन्त्रों का रहस्य

मन्त्र, गुरु व देवता की एकता

मन्त्रों की मुख्य बातें

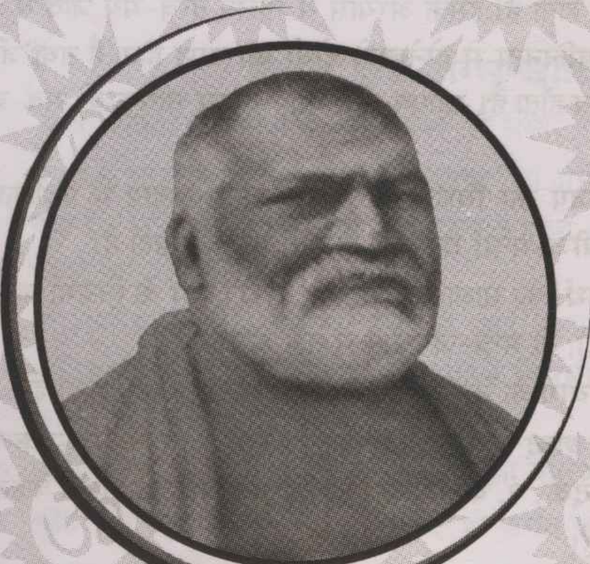

मन्त्र-विद्या भारत वर्ष की बहुत प्राचीन विद्या

'राष्ट्र-गुरु' पूज्य-पाद श्रीस्वामी जी महाराज

योगों में 'मन्त्र'-योग

✦ प्रकृति के विचित्र परिणामों द्वारा अनेक प्रकार की सङ्कीर्णता–मनुष्य के व्यवहारों में आ जाती है, जिससे मनुष्य को यथार्थ का अनुभव नहीं होता और वह अज्ञान के फेर में पड़ जाता है। अतः योग के आचार्यों ने योगाभ्यास द्वारा तन-मन को शुद्ध करने की रीति बताई है।

✦ १. मन्त्र, २. हठ, ३. लय और ४. राज के भेद से 'योग'–चार प्रकार का माना जाता है। इन चारों प्रकारों से हृदय की शुद्धि, परमात्मा का साक्षात्कार तथा अणिमा आदि अनेक सिद्धियों की प्राप्ति योगी को होती है।

✦ सिद्धियों की अपेक्षा चित्त की समता और विषयों में वैराग्य होना ही योग का मुख्य लक्ष्य है। सिद्धियाँ तो परमार्थ की बाधक हैं। योग्य योगी ही सिद्धियों का ठीक उपयोग कर सकता है। अतः इस विषय में योगी को अत्यन्त सावधान रहना चाहिए। योगों में 'मन्त्र-योग' सबसे सुलभ तथा स्वाभाविक है।

✦ 'मन्त्र-योग' का आश्रय सभी योगों में लिया जाता है क्योंकि परमात्मा के साक्षात्कार में 'मन्त्र' ही सबसे अधिक सहायक होते हैं।

'मन्त्र'—सात्त्विक शुद्ध भावों का बोधक

✦ मनन करने से त्राण अथवा रक्षा जो करता है, उसे मन्त्र कहते हैं।

✦ मन्त्र–सात्त्विक शुद्ध भावों का बोधक होता है। इसके अभ्यास से मलिन तत्त्व–मय जीव में शुद्ध सात्त्विक भाव की अभिव्यक्ति होकर मलिनता से होनेवाले दोषों का नाश होता है तथा जीव-भाव निवृत्त होकर ब्रह्म का सान्निध्य प्राप्त होता है। अतएव मन्त्र का आश्रय साधक को सर्व-प्रथम लेना चाहिए।

✦ अनेक विलक्षण शक्तिवाले मन्त्रों के जप का विधान प्रत्येक साधक-सम्प्रदाय में प्रचलित है। वैष्णव, शैव, शाक्त मतों में नाम तथा बीज-मन्त्रों का जप अत्यन्त महत्त्व रखता है।

✦ 'जप' से ही 'मन्त्र' सिद्ध होता है तथा 'अर्थ' का साक्षात्कार होता है, तथापि जप के नियमों का और उसकी भिन्न-भिन्न रीतियों का परिज्ञान न हो, तो मन्त्र-जप सफल नहीं हो सकता।

✦ प्रत्येक मन्त्र को स्वर, अर्थ, छन्द, विनियोग के ज्ञान–पूर्वक जपने से सफलता शीघ्र होती है।

✦ शुद्ध सात्त्विक दैवी भाव का व्यञ्जक शब्द ही मन्त्र कहलाता है। दैवी भाव के व्यञ्जक चार सम्प्रदाय मन्त्रों से ही बने हैं, जिन्हें १. वैदिक, २. पौराणिक, ३. तान्त्रिक और ४. शाबर कहते हैं। उत्तरोत्तर की अपेक्षा पूर्व-पूर्व का श्रेष्ठत्व है।

'मन्त्रों' के जप का रहस्य

✦ 'जप' तीन प्रकार का होता है–१. वाचिक, २. उपांशु और ३. मानस।

- जिस '**जप**' में शब्द स्पष्ट उच्चारण-पूर्वक ध्वनि के साथ सुनाई दे, उसे '**वाचिक**' कहते हैं।
- जिस '**जप**' में शब्द तो सुनाई नहीं देता, केवल ओष्ठ-मात्र वागिन्द्रिय की क्रिया से स्पन्दित होते हैं, उसे '**उपांशु जप**' कहते हैं।
- अर्थ-ज्ञान-पूर्वक मन-ही-मन जब साधक **मन्त्र-जप** करता है, तो उसे '**मानसिक जप**' कहते हैं। '**वाचिक**' से '**उपांशु**' तथा '**उपांशु**' से '**मानस जप**' उत्तम माना जाता है।
- परमात्मा का वाचक **प्रणव (ॐ)** है, उसका '**जप**' तथा उसके '**अर्थ की भावना**' करना चाहिए। **महर्षि पतञ्जलि ने योग-विघ्नों को दूर करने के लिए तथा परामात्मा के अनुग्रह के लिए** मन्त्र-श्रेष्ठ '**ॐ-कार**' के जप का विधान बताया है। '**ओमित्येकाक्षर-ब्रह्म, व्याहरन्मामनुस्मरन्**'-**गीता** के इस वचन में भी यही तत्त्व लिया गया है। '**जप**' सब यज्ञों में श्रेष्ठ है। इसी से **भगवान्** ने '**गीता**' में '**यज्ञानां जप-यज्ञोऽस्मि**' अर्थात् '**यज्ञों में जप-यज्ञ मैं हूँ**'-बताया है।
- '**जप**' के द्वारा '**मन्त्र**'-चैतन्य होता है और **कुण्डलिनी-शक्ति की जागृति** होती है। तदनन्तर '**मन्त्र**'-**देवता का रूप** धारण करता है। **देवता का दर्शन, आवेश** और **साक्षात्कार**-इन तीन अवस्थाओं के सम्पन्न होने पर **कुण्डलिनी की पूर्ण जागृति** हो जाती है। इसी अवस्था में **सिद्धि-कामियों** को '**सिद्धि**' तथा **निष्काम साधकों** को '**मुक्ति**' का अधिकार प्राप्त होता है।
- **भिन्न-भिन्न मन्त्रों के सिद्धि-काल में अनेक दिव्य मूर्तियों के स्वरूप का दर्शन** साधक को होता है। **कुण्डलिनी** द्वारा ही इन **प्रकाश-मय दिव्य-रूपों की सृष्टि** होती है।

मन्त्रों की जन्म-दात्री—शब्द-शक्ति

- '**मन्त्र**'-शब्दात्मक होता है और '**शब्द**' ही संसार के समस्त व्यवहारों का कारण है।
- संसार के परम कारण '**ब्रह्म**' के साथ '**शब्द**' का अभेद सम्बन्ध है। **बाइबिल** में भी स्पष्ट-रूप से कहा गया है-'**सृष्टि के आरम्भ-काल में केवल शब्द था। वह परमात्मा के साथ था और वह स्वयं परमात्मा-स्वरूप था।**'
- **परा-शक्ति** जब सृष्टि करने की इच्छा से '**अहं**'-रूप से **ब्रह्म का प्रकाशात्मक भाव** तथा '**इदं**'-रूप से **विषय** का **विमर्शात्मक रूप** धारण करके **विषयी** और **विषय-रूप** को व्यक्त करती है, उसका हेतु '**शब्द**' ही माना जाता है।
- **महर्षि व्यास** ने '**वेदान्त-दर्शन**' में **सृष्टि का कारण**-'**शब्द**' ही बताया है।
- **श्रुति** और **स्मृति** के अनुसार भी '**शब्द**' **ही जगत् का कारण** है। संसार में '**शब्द**' ही **अत्यन्त सूक्ष्म अवस्था** है। '**शब्द**' की **आदिम अवस्था** को '**परा-वाणी**' कहते हैं। यह **ब्रह्म की भाषा** कही जाती है। **मूलाधार** से इसकी अभिव्यक्ति होती रहती है। इसे **योगी** ही जान सकते हैं। **मन्त्रों, बीजों का विकास** इसी से होता है।

✦ जब '**शब्द**'-रूपी सूक्ष्म अवस्था में '**विमर्श**' और '**प्रकाश**' की **स्थूलावस्था** होने लगती है, तब उसे '**नाद**' कहा जाता है। '**नाद**' में ही **समस्त वर्ण**-अर्थ-प्रकाशन एवं रूप-सामर्थ्य के साथ रहते हैं। ज्यों-ज्यों सृष्टि **स्थूल रूप** धारण करती जाती है, त्यों-त्यों '**शब्द**' भी स्पष्ट रूप धारण करता जाता है और सूक्ष्म **परा-वाणी** के बाद क्रम से तीन वाणियाँ-**१. पश्यन्ती, २. मध्यमा** और **३. वैखरी** प्रकट होती हैं।

✦ सूक्ष्माति-सूक्ष्म '**परा-वाणी**'-**सत्य** और **नित्य** है। शेष वाणियों में **माया** या **अज्ञान** के परिणामों का सम्बन्ध होने से **सत्य का प्रकाश** क्रमशः न्यून अर्थात् कम होता जाता है और इनमें न्यूनता मानकर ही वाणी के तीन अतिरिक्त भेद **१. पश्यन्ती, २. मध्यमा** और **३. वैखरी** किए गए हैं।

✦ '**आत्मा**' जब **बुद्धि** के द्वारा अर्थों को लेकर **मन** के साथ बोलने की इच्छा से युक्त होता है, तब '**मन**'-शरीर की अग्नि में आघात करता है। वह आघात '**वायु**' को प्रेरणा करता है, जिससे वक्षः-स्थल में **गम्भीर स्वर** की उत्पत्ति होकर (**पश्यन्ती, मध्यमा** से आगे) **वैखरी** नामक अत्यन्त '**स्थूल वाणी**' प्रकट होती है।

✦ **व्याकरण-शास्त्र** में वर्णों से भिन्न '**स्फोट**' को '**शब्द**' बताया गया है। '**नाद**' को **वर्ण का नाम** बताया गया है। **व्याकरण-शास्त्र** के अनुसार- "**नादाभिव्यंज्यः शब्दः स्फोटः**" अर्थात् '**नाद**' या '**वर्ण**' से **स्फोट की व्याप्ति** या **प्रकाश** होता है और वह **नित्य** है।

✦ **उपवर्णाचार्य** के मत के अनुसार '**वर्ण**' ही '**शब्द**' हैं।

✦ '**स्फोट-वाद**' को **महर्षि पतञ्जलि, भर्तृहरि, कैय्यट** आदि प्रसिद्ध वैयाकरण भी मानते हैं।

✦ **नागेश भट्ट** ने भी '**स्फोट-मत**' का ही '**परम लघु मञ्जूषा**' में प्रतिपादन किया है।

✦ '**शब्द**'-तत्त्व को व्यक्त करने के लिए **व्याकरण-शास्त्र** में **६३** अथवा **६४ वर्ण** माने जाते हैं- "**त्रिषष्टि-चतुष्षष्टिर्वा, वर्णाः शम्भु-मते मताः। प्राकृते संस्कृते चापि, स्वयं प्रोक्ताः स्वयं-भुवा। आत्म-बुद्ध्या समेत्यार्थात् मनोयुङ्क्ते विवक्षया मनः, कायाग्निमादन्ति सप्त-रमति मारुतम्। चरन् मन्द्रं जनयति स्वरम् ।।**" (पाणिनीय शि० ३,६,७)। अर्थात् **प्राकृत** तथा **संस्कृत** में **६३** या **६४ वर्णों** को स्वयं **स्वयम्भू भगवान्** ने कहा, ऐसा **पाणिनीय शिक्षा** स्पष्ट रूप से कहती है।

✦ '**शब्दः खे पौरुषं नृषु**', '**शब्द-ब्रह्मणि वर्तते**', '**ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म**'-इत्यादि '**गीता**' के वचनों में भी '**शब्द-तत्त्व**' की विवेचना की गई है।

✦ उदात्त, अनुदात्त और **स्वरित** के भेदों से **१. षड्ज, २. ऋषभ, ३. गान्धार, ४. मध्यमा, ५. पञ्चम, ६. धैवत** और **७. निषाद**-**ये सात स्वर** भी शब्द के उच्चारण में माने जाते हैं।

✦ '**योग-शास्त्र**' में-**१. नाद, २. विन्दु, ३. कला**-ये तीन नाम '**शब्द**' को अवस्था-भेद से दिए गए हैं। जैसे-जैसे अर्थों में विचित्रता होती जाती है, वैसे-वैसे '**शब्द**' भी '**रूप**' धारण करता जाता है।

✦ तान्त्रिक कुल वर्णों की संख्या ५१ मानते हैं। शेष १२ व १३ वर्ण 'वेद' में उच्चारण-भेद से माने जाते हैं। वास्तव में ५१ मातृकाओं में ही वाङ्मय का समावेश यथार्थ रूप में हो जाता है।

विशिष्ट भावों को प्रकट करने के लिए वीज-मन्त्र

✦ तन्त्रों में विशिष्ट भावों को प्रकट करने के लिए वीज-मन्त्रों का भी समावेश है। भगवान् की आठ मुख्य प्रकृतियों की भाँति 'तन्त्रों' के 'वीज-मन्त्रों' में भी आठ प्रधान वीज हैं। 'मन्त्र-योग-संहिता' में इन्हें इस प्रकार कहा गया है–

गुरु-वीजं शक्ति-वीजं, रमा-वीजं ततो भवेत्। काम-वीजं योग-वीजं, तेजो-वीजमथापरम्।
शक्ति-वीजं च रक्षा च, प्रोक्ता चैषां प्रधानता।।

अर्थात् ऐं, ह्रीं, श्रीं, क्लीं, क्रीं, ट्रीं, स्त्रीं, ह्लीं– ये आठों वीज ॐ कार-रूप शब्द-ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं।

✦ तन्त्र-शास्त्र में मन्त्रों के तीन प्रकार हैं–१. वीज-मन्त्र, २. मन्त्र और ३. माला-मन्त्र। मन्त्र और माला-मन्त्र का अर्थ तो स्पष्ट होता है, किन्तु वीज-मन्त्र अपने अर्थ 'जप' से प्रकट करते हैं।

✦ मन्त्रों से ही कुण्डलिनी का उत्थान होता है और सोई हुई विविध दैवी शक्तियाँ जागृत होती हैं तथा जीव अविद्या से मुक्त होकर ब्रह्मानन्द का भोक्ता बनता है।

मन्त्र, गुरु व देवता की एकता

✦ मन्त्र, गुरु व देवता में अभेद है। देवता का ही पूर्व-रूप शब्द या मन्त्र है। जैसे देवता हैं, मन्त्र तथा गुरु भी वैसे ही हैं। इनके पूजन से तुल्य फल होता है। इससे देवता के साथ अभेद और नित्यता ज्ञात होती है।

✦ पर-ब्रह्म परमात्मा ही देवता के रूप में अपनी ज्ञान-शक्ति द्वारा व्यक्त होता है। अनेक देवताओं के भिन्न-भिन्न स्वरूप जो हमारे धर्म में माने गए हैं, वे मन्त्रों द्वारा ही ज्ञात होते हैं। यद्यपि मन्त्रों द्वारा ही देवताओं की अनेकता व्यक्त होती है, तथापि उनमें प्रकट चेतन-तत्त्व एक ही होता है। 'एकं सद विप्रा बहुधा वदन्ति'–इस मन्त्र में यही बताया गया है।

✦ शब्द-तत्त्व या जिसे शब्द-शक्ति कहते हैं, उसका साहचर्य ज्ञान या ज्ञान-शक्ति के साथ है। बिना शब्द-शक्ति के ज्ञान नही हो सकता अर्थात् ज्ञान का व्यञ्जक-शब्द है। जैसे शब्द का अर्थ से सम्बन्ध है, वैसे ही ज्ञान से भी उसका सम्बन्ध है। आनन्द-शक्ति एवं क्रिया-शक्ति भी ज्ञान-शक्ति द्वारा ही अपना स्वरूप प्रकट करती है।

✦ जितने भी भौतिक, दैविक और आध्यात्मिक रहस्य हैं, वे सब ज्ञानात्मक ही हैं। उनका प्रकाशन शब्दात्मक ग्रन्थों, मन्त्रों, आख्यानों, इतिहासों द्वारा ऋषियों, आचार्यों, साधु-सन्त-महात्माओं

ने किया है। इसी तत्त्व को उपासक **सरस्वती-शक्ति** के रूप में ध्यान करते हैं। **सरस्वती** के ध्यान में **वीणा, पुस्तक** द्वारा **शब्द-शक्ति**, नीर-क्षीर-विवेक करनेवाले **हंस-वाहन** द्वारा **विवेक-शक्ति** का साहचर्य ज्ञात होता है। इससे **ध्यान की रहस्य-मयी कल्पना** का भाव अच्छी तरह व्यक्त होता है।

- मन्त्र का ठीक अभ्यास होने पर जो **शुद्ध सात्त्विक स्वरूपवाला तत्त्व** साधक के सम्मुख प्रकट होता है, उसे ही **राम, कृष्ण, शिव, शक्ति, नारायण** आदि नाम दिए गए हैं। इन **स्वरूपों का तात्त्विक स्वरूप-परिचय** एवं इन स्वरूपों के साक्षात्-कर्त्ता **साधक के गुण, स्वभाव का ज्ञान** कि अमुक साधक का अधिकार किस भाव के साक्षात्कार के योग्य है, किस भाव के देव के साथ इसका ऐक्य है, कौन भाव इस साधक पर अनुग्रहीत हो सकता है-आदि बातों का निर्णय केवल **तत्त्वज्ञ गुरु** ही जान सकते हैं।
- **मन्त्र-साधना-मार्ग** में जो स्थान **पर-ब्रह्म** का है, वही **गुरु** का है। जिस साधक को **देव** तथा **गुरु** में **समान बुद्धि से भक्ति** होती है, उसी को **उपनिषद्** के अर्थ प्रकाशित होते हैं। जो लोग अपने मन से ही साधना करते हैं और **सद्-गुरुओं की प्रेरणाएँ** प्राप्त नहीं करते, उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होता।
- **शास्त्रों** में साधना सम्बन्धी सभी बातें पर्याप्त रूप में बताई गई हैं, तथापि अभ्यास-काल की बातों का निर्णय तो **गुरु** ही कर सकते हैं। इसलिए **परम श्रद्धा** एवं **विश्वास से गुरु की शरण** लेना **साधक का मुख्य कर्तव्य** है।
- अनादि अनन्त सच्चिदानन्द-स्वरूपिणी '**परा-शक्ति**' ही '**मन्त्र-शास्त्र**' द्वारा वर्णित विषय है। यद्यपि **शैव, वैष्णवादि मन्त्र** भी लोक में प्रसिद्ध हैं, तथापि वे सभी '**शक्ति**' के ही स्वरूप हैं।
- **श्रीगौड़पादाचार्य** के-'**अथ शाक्त-मन्त्रागम-जिज्ञासा**' सूत्र की व्याख्या में **श्री शङ्करारण्य** जी ने कहा है-'**शक्ति-सम्बन्धावच्छिन्नतया सर्वस्य शाक्तत्वात्** ।' अर्थात् सभी **मन्त्रों** में '**शक्ति**' रहने से सभी '**मन्त्र**'-**शाक्त** हैं।
- **शक्ति**-पदार्थ ही **मन्त्र, गुरु** और **देवता** का रूप धारण करके **साधना का मुख्य आधार** प्रस्तुत करता है। यद्यपि प्रथमावस्था में **१. मन्त्र, २. गुरु** और **३. देवता**-ये तीनों भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं, तथापि इनकी भिन्नता वास्तविक नहीं है।
- **मन्त्र, गुरु** और **देवता**-इन तीनों का अनेक प्रकार का विस्तार '**षडाम्नाय**' नाम से कहा जाता है। '**पूर्वाम्नाय**' में **२४ सहस्त्र देवता** माने गए हैं, **३० सहस्त्र**-'**दक्षिणाम्नाय**' में, **३ सहस्त्र**-'**पश्चिमाम्नाय**' में, **२ सहस्त्र**-'**उत्तराम्नाय**' में और **१ सहस्त्र**-'**ऊर्ध्वाम्नाय**' में। यह संख्या '**श्रीविद्या-रत्न-सूत्र**' की व्याख्या में १० वें सूत्र से १४ वें सूत्र तक निर्दिष्ट है। '**सप्त-विंशति-रहस्य**' में भी इसी से मिलती-जुलती **देव-गणना** निर्दिष्ट है। इन देवताओं के असंख्य '**मन्त्र**' हैं।
- किसी-किसी स्थान पर **मन्त्रों की संख्या सात करोड़** बताई गई है, जिनके वेत्ता एक-मात्र **भगवान् शिव** ही हैं। कदाचित् ही कोई **मन्त्र-शास्त्री** इन सभी मन्त्रों को जानता होगा।

मन्त्रों की मुख्य बातें

- मन्त्र में १. छन्द, २. ऋषि, ३. देवता, ४. वीज, ५. कीलक और ६. शक्ति–ये छः बातें मुख्य हैं।
- वैदिक मन्त्रों में केवल छन्द, ऋषि और देवता–इन तीन का ही उपयोग होता है।
- शाबर मन्त्रों के विषय में '**अनमिल आख़र अर्थ न जापू**' और '**शाबर-मन्त्र-जाल जिन सिरजा**' आदि सभी जानते हैं।
- **पौराणिक मन्त्र भाव-प्रधान होते हैं**– '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' आदि। इन मन्त्रों में क्रिया गौण होती है। **इष्ट-रूप की भावना**–मन में सतत रूप से बनी रहने से ही सिद्धि होती है।
- क्रिया की मुख्यता **तान्त्रिक मन्त्रों** में ही अपेक्षित है।
- **वैदिक मन्त्रों में भावना और क्रिया** दोनों मुख्य हैं।
- मन्त्र का उच्चारण '**छन्द**' के अनुसार, मन्त्र-तत्त्व के आविष्कर्ता का परिचय '**ऋषि**' से, समस्त इष्ट-फल के प्रदान करनेवाले '**देवता**' का परिज्ञान '**मन्त्र**' एवं '**ध्यान**' की रीति से करना होता है।
- **मन्त्र का मूल तत्त्व** संक्षिप्त रूप से '**वीज**' में होता है।
- विरोधी शक्ति, जो तत्त्व का विनाश करती है तथा साधक को साधना से हटाती है, उसके विरोध के लिए '**कीलक**' का उपयोग होता है।
- **मन्त्र में चैतन्य-शक्ति** का सञ्चार '**शक्ति**' से होता है।
- विशिष्ट भावों की अभिव्यक्ति के लिए **अन्तर्मातृका, बहिर्मातृका**, षोढा आदि **न्यास** निर्दिष्ट हैं। **अन्तर्याग और बहिर्याग** द्वारा **देवता का पूजन, तर्पण, होम, पुरश्चरण, संस्कार** आदि के द्वारा '**मन्त्र**' शीघ्र ही सिद्ध होता है। इन उपायों से **मन्त्र चैतन्य होकर देवता का साक्षात्कार** होता है।
- **मन्त्र-योगी** को उक्त रहस्यों को ध्यान में रखकर **मन्त्र-साधना** में प्रवृत्त होना चाहिए।

भारत-वर्ष की बहुत प्राचीन विद्या—'मन्त्र-विद्या'

- '**मन्त्र-विद्या**'–**भारत-वर्ष की बहुत प्राचीन विद्या** है। यह बात इतिहास से भी प्रकट है कि **भारतीय** ही भिन्न-भिन्न भू-खण्डों में जाकर निवास करने से, भिन्न-भिन्न जातियों के नाम से व्यवहृत हुए हैं। **आदिम सृष्टि एवं सभ्यता का उद्‌गम–भारत** ही है। आर्य लोग, जैसे अपनी अन्य संस्कृति को **भारत** से ले गए, वैसे ही उन देशों में अपनी रहस्य-मयी परम गोपनीया '**मन्त्र-विद्या**' को भी अपने साथ ले गए।
- **ईराक, अरब** जैसे विदेशों में कई **शक्ति-स्थान** अभी भी पूजे जा रहे हैं। '**क्रीं**' और '**ह्रीं**' के अपभ्रंश क्रमशः '**करीम**' और '**रहीम**'–इस्लाम संस्कृति में कितने प्रचलित हैं! यहाँ तक कि **सूफियों, सन्तों** और आधुनिक काल के **महात्मा गांधी** तक ने उन्हें अपनाया–'**राम-रहीम**' की धूम मच गई!

✦ रूस तथा यूरोप के भिन्न-भिन्न भागों में भी 'मन्त्र-विद्या' के भिन्न-भिन्न स्वरूप दृष्टि-गत होते हैं।

✦ चीन और तिब्बत तो मान्त्रिक देश ही माने जाते हैं। जापान की सूर्योपासना प्रख्यात है।

✦ 'मन्त्र-विद्या' के उक्त विस्तृत प्रचार को सारे विश्व में देखकर इसकी प्राचीनता एवं प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं रह जाता।

मनन करने योग्य बातें

'मन्त्र-शक्ति' के ऊपरी रूप से उसकी भीतरी शक्ति का परिचय नहीं मिल सकता।

❀ ❀ ❀

'साधना' से ही 'मन्त्र' की आन्तरिक शक्ति प्रकट होती है।

❀ ❀ ❀

विश्व के कल्याण का बीज-'मन्त्र-शक्ति' में ही समाहित है।

❀ ❀ ❀

उच्च विचार एवं भाव-रूपी 'मन्त्र' से अखिल विश्व का कल्याण होता है।

❀ ❀ ❀

एक साधारण व्यक्ति द्वारा उत्पन्न 'शब्द-कम्प' की अपेक्षा एक जन-सङ्घ द्वारा एक ही प्रकार के 'शब्द' से उत्पन्न 'कम्प' में कहीं अधिक शक्ति होती है।

❀ ❀ ❀

शब्द में 'मन' की विचित्र गति को स्तम्भित अथवा खींचे जाने की शक्ति होती है।

❀ ❀ ❀

सङ्गीत जिस भावना से युक्त होता है, उसी जाति की भावनाओं में 'मन' खिंचता है।

❀ ❀ ❀

परमात्मा के साक्षात्कार में 'मन्त्र' ही सबसे अधिक सहायक होते हैं।

❀ ❀ ❀

मन्त्र का आश्रय साधक को सर्व-प्रथम लेना चाहिए।

❀ ❀ ❀

'जप' के द्वारा 'मन्त्र'-चैतन्य होता है और कुण्डलिनी-शक्ति की जागृति होती है।

❀ ❀ ❀

संसार के परम कारण 'ब्रह्म' के साथ 'शब्द' का अभेद सम्बन्ध है।

❀ ❀ ❀

मन्त्रों से ही कुण्डलिनी का उत्थान होता है और सोई हुई विविध दैवी शक्तियाँ जागृत होती हैं।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-कल्पतरु

'मन्त्र' अर्थात् मानसिक क्रिया

'मन्त्रों' का सार 'चित्त'

मन्त्रों की शक्तियाँ

साधना-शक्ति और 'मन्त्र' की प्रक्रियाएँ

सर्व-शक्ति-मयी मन्त्र-शक्ति

मन्त्र-विद्या का महत्त्व

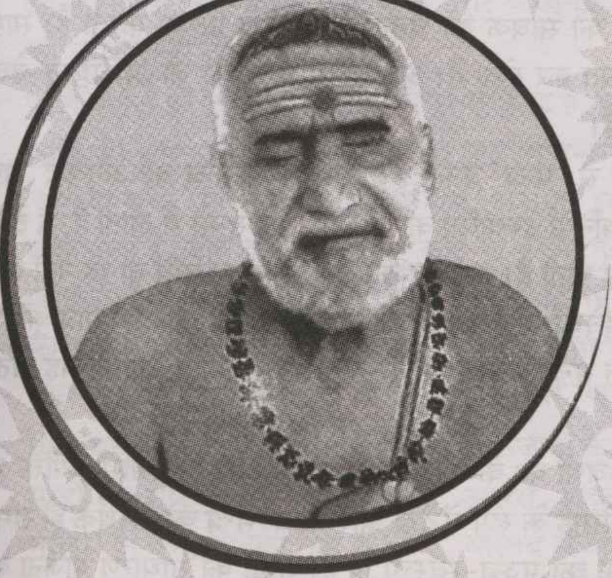

मन्त्र-शास्त्र का तात्पर्य

'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त जी शुक्ल

'मन्त्र' अर्थात् मानसिक क्रिया

- 'गायत्री तन्त्र' में लिखा है कि–'**मन्त्र**' वही कहा जाता है, जिसका **मनन** करने से जीव पाप से मुक्त होकर स्वर्ग-सुख और मोक्ष प्राप्त करता है। इसकी सहायता से **चतुर्वर्ग** (१. धर्म, २. अर्थ, ३. काम, ४. मोक्ष) की उपलब्धि होती है।
- '**मन्त्र**' के सम्बन्ध में अन्यत्र यह कहा गया है कि–'**मन्त्र**' इसलिए नाम पड़ा क्योंकि यह **मानसिक क्रिया** से प्राप्त होता है।
- '**मन्त्र**' का '**मन्**'–मनन से और '**त्र**'–त्राण अर्थात् संसार-बन्धन के मोक्ष से निकला है। '**मन्**' और '**त्र**' के संयोग से '**मन्त्र**' बनता है, जो **चतुर्वर्ग** का आमन्त्रण करता है।

तेज या शक्ति का पुञ्ज-स्वरूप—'मन्त्र'

- '**मन्त्र**'–वर्णों से बनता है। **वर्ण** और उनके पारस्परिक संयोग से बने **अक्षर** और **शब्द**–ये सभी **व्यक्त** शब्द के स्वरूप हैं अर्थात् **ब्रह्म-रूप** हैं। उनमें से प्रत्येक **सृष्ट्यात्मक शक्ति** का स्वरूप है–मुख से उच्चरित, कान से श्रुत और मन से गृहीत, परन्तु साधारण-तया जिन्हें '**मन्त्र**' कहा जाता है, वे हैं–**विशिष्ट ध्वनियाँ**, जिनका प्रयोग **पूजन** और **साधना** में किया जाता है। इन ध्वनियों के ध्यान से अक्षरों की क्रमिक योजना होती है।
- '**मन्त्र**' के **वर्ण**, **नाद**, **विन्दु**, **स्वर** और **व्यञ्जन** के सम्बन्ध से **विभिन्न स्वरूपवाले देवताओं का निर्देश** होता है। कुछ वर्णों में देवता की कुछ विभूति निहित रहती है। किसी **देवता का मन्त्र** वह '**वर्ण**' या '**वर्णों की योजना**' है, जो उस **देवता** को साधक की चेतना के सम्मुख प्रत्यक्ष करता है। साधक अपनी **साधना की शक्ति** से **मन्त्र** को जाग्रत कर लेता है। अतः जिस **मन्त्र** का जो **अधिष्ठातृ-देवता** होता है, उसका स्वरूप उससे प्रकट होता है।
- **वर्ण** और **स्वर** की उपयुक्त क्रमिक योजना से '**मन्त्र**' बनता है। इसी कारण **मन्त्र** का अनुवाद '**मन्त्र**' नहीं रह जाता क्योंकि **मन्त्रानुवाद** से जो ध्वनियाँ उच्चारित की जाती हैं और सुनने में आती हैं, वे **देवता का शरीर** नहीं होतीं–न **देवता** को प्रगट कर पाती हैं। अनुवाद की दशा में **मूल ध्वनि** तो रह नहीं जाती, उसके स्थान में **दूसरी भाषा की दूसरी ध्वनियाँ** आ जाती हैं, जो **संस्कृत-मन्त्र** का अर्थ मात्र बुद्धि को बतलाने में समर्थ होती हैं। इससे स्पष्ट है कि **मन्त्र** केवल **व्यक्ति-गत मनन** नहीं है, अपितु वह **चेतना का एक विशेष शब्द-शरीर** है।
- कोई विशेष '**मन्त्र**' (जैसे **गायत्री मन्त्र**)–वर्णों का केवल समूह मात्र नहीं है। अविश्वासी व्यक्ति भले किसी **मन्त्र** को एक विचित्र अर्थवाले वर्ण-समूह के रूप में देखे और **बीज-मंत्र** को निरर्थक ही समझे, परन्तु साधक के लिए तो वह **तेज या शक्ति का पुञ्ज-स्वरूप** ही है। शब्दों की साधारण योजना कुछ स्थूल है। अन्यों की भाँति ये **शक्ति के स्वरूप** हैं, परन्तु जिस **मन्त्र** की चर्चा ऊपर की गई है, वह **मन्त्र-रूप शक्ति** का समुच्चय है।

✦ **कहावतें**–संसार के मनुष्यों को सूचना और परामर्श प्रदान करती हैं, जब कि '**मन्त्र**'–मानव से परे शक्ति को जाग्रत करते हैं। अतः एक साधारण **कहावत**–जन्म और मृत्यु को प्राप्त होनेवाले जीव के समान है और '**मन्त्र**' है– **अव्यर्थ अविनाशी शब्द-स्वरूप में साक्षात् ब्रह्म।**

✦ '**मन्त्र**' वही वस्तु नहीं है, जो **प्रार्थना का आत्म-निवेदन** है। '**प्रार्थना**'–प्रार्थी के चुने हुए किन्हीं भी शब्दों में की जा सकती है और उसका अर्थ बिल्कुल स्पष्ट होता है। जो शास्त्रीय सिद्धान्तों को नहीं जानते, वही यह समझते हैं कि '**मन्त्र**'–केवल देवता के प्रति प्रार्थना करने के लिए अनेक शब्दों के स्थान पर एक प्रतीक मात्र है। यदि ऐसा होता, तो **शास्त्र द्वारा निर्दिष्ट अविनाशी ध्वनियों की खोज** किए बिना साधक अपनी ही भाषा से काम निकाल लेता।

'मन्त्रों' का सार—'चित्'

✦ '**शब्द**'–**शक्ति** है। '**विश्वसार तन्त्र**' में लिखा है कि–'**मन्त्र-मय शब्द-ब्रह्म जीव के शरीर में वर्तमान रहता है और वह जीव की शक्ति का सूक्ष्म स्वरूप है।**' जैसा कि '**प्रपञ्चसार तन्त्र**' में कहा है–'**यह सारा ब्रह्माण्ड ध्वनि-रूप शक्ति से व्याप्त है। इस ध्वनि को नाद, प्राण आदि भी कहा जाता है। यदि शब्द सूक्ष्म रूप में वर्तमान न होता, तो उसके स्थूल रूप का उद्‌घाटन होना सम्भव नहीं था।**'

✦ '**शब्द**'–**आकाश का गुण** है, परन्तु आकाश के द्वारा उसकी उत्पत्ति नहीं होती। वह आकाश में प्रकट होता है और **शब्द-स्वरूप ब्रह्म** है। जिस प्रकार बाह्य शून्य मण्डल में वायु की गति से ध्वनि की लहरें उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार वे जीव के शरीर के अवकाश में भी **प्राण-वायु** की गति और **श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया** से उत्पन्न होती हैं।

✦ पहले-पहल जो शब्द '**मूलाधार**' में उत्पन्न होता है, वह वास्तव में जीव को **जीवन प्रदान करनेवाली शक्ति** है। श्वास-प्रश्वास लेता हुआ जीव एक '**महा-मन्त्र**' का उच्चारण करता है। यह '**महा-मन्त्र**' है– '**अजपा मन्त्र**' या '**हंसः**'। इसका नाम '**अजपा**' इसलिए है क्योंकि यह **स्वयं स्वभावतः उच्चरित** होता जाता है, जीव को उसके लिए कुछ भी प्रयास नहीं करना पड़ता। यह **ध्वनि की श्वास-क्रिया** है, जो **क्रमिक श्वास-प्रश्वास का हेतु** है। **चित्-शक्ति** ही इस मधुर, अस्पष्ट और गुनगुनाती ध्वनि का कारण है। यह भ्रमर के गुञ्जन के समान प्रतीत होता है। यही ध्वनि '**परा**' है और बाद में '**पश्यन्ती**', जिसका सूक्ष्म-रूप '**मध्यमा**' कहा जाता है और स्थूल-रूप '**वैखरी**'।

✦ **वर्ण-मयी** एवं **ध्वनि-मयी** '**कुण्डलिनी**'–जीवों के शरीरों में **परमात्मा का स्वरूप** है। अतः **समस्त मन्त्रों का सार**–'**चित्**' है, जो **वर्णों, अक्षरों, शब्दों** और **वाक्यों** के रूप में प्रगट होती है। '**वर्ण-माला**' के वर्ण, जिनका नाम **अक्षर** है, वास्तव में **अक्षर** अर्थात् **अविनाशी ब्रह्म के यन्त्र** हैं। विभिन्न देवताओं के स्वरूप में प्रकट होनेवाली '**कुण्डलिनी**' का स्थूल-रूप ही **समस्त मन्त्रों की अधिष्ठातृ-देवता** है, यद्यपि साधक लोग उसके **सूक्ष्म-रूप** को ही अपना लक्ष्य बनाते हैं।

'मन्त्र' की दो शक्तियाँ

✦ प्रत्येक 'मन्त्र' में दो शक्तियाँ होती हैं–१. **वाच्य शक्ति** और २. **वाचक शक्ति**। **प्रतिपाद्य देवता** तो वाच्य शक्ति है और **मन्त्र-मयी देवता है–वाचक शक्ति**। इस प्रकार यदि किसी **मन्त्र की देवता** 'दुर्गा' हैं, तो उसकी वाच्य शक्ति होगी '**महा-माया**'। अपर '**वाच्य शक्ति**'–**निर्गुण** होती है और '**वाचिका शक्ति**'–**सगुण** होती है। '**वाचिका शक्ति**'–**पूजन का आधार** होती है और वही **साधन** एवं **सहायक** होती है, जिससे '**वाच्य शक्ति का साक्षात्कार**' होता है। जब **मन्त्र-स्वरूपा, मन्त्र-गर्भा सगुण** '**वाचिका शक्ति**'–साधना-द्वारा चैतन्य होती है, तब वह **परम सत्य का उद्घाटन** करती है, जिससे **ब्रह्माण्ड का सार** और **सच्चा स्वरूप** प्रगट हो जाता है।

✦ इस प्रकार दो प्रकार की शक्तियाँ हैं–१. **मन्त्र-शक्ति** और २. **साधना-शक्ति**। '**साधना-शक्ति**' से मतलब उस शक्ति से है, जो साधक में साधना के द्वारा उत्पन्न होती है। इन दोनों शक्तियों के एकत्र होने से ही '**मन्त्र-साधना**' का **फल** मिलता है।

'साधना-शक्ति' और 'मन्त्र' की प्रक्रियाएँ

✦ '**साधना**' के द्वारा **सगुण शक्ति** जाग्रत होती है और उसकी **पूजा** की जाती है। यही **सगुण देवता–मन्त्र की अधिष्ठातृ देवता** है, जब कि **निर्गुण ईश्वर या ईश्वरी है–'वाच्य शक्ति'**। मूलतः दोनों एक हैं, परन्तु जीव को अपनी **त्रि-गुणात्मक प्रकृति** के अनुसार पहले **स्थूल-रूप का ध्यान** करना ही पड़ेगा। तब वह **सूक्ष्म-रूप का साक्षात्कार** कर सकेगा, जो कि दूसरे शब्दों में '**मोक्ष**' है।

✦ '**मन्त्रार्थ**' और '**मन्त्र-प्रकिया**' को जाने बिना **मन्त्र का उच्चारण** करना, ओठों का हिलाना मात्र है और कुछ नहीं। '**मन्त्र**' सोता रहता है। उसको जाग्रत करने के लिए कुछ क्रियाएँ निर्दिष्ट हैं। उन्हें कर लेने पर '**मन्त्र**' का **शुद्ध उच्चारण** हो पाता है। वे क्रियाएँ इस प्रकार हैं–

(१) **मुख-शोधन**–देखिए '**शारदा-तिलक तन्त्र**', अध्याय १०। '**प्रणव**' या '**ॐ**' मन्त्र का जप। अन्य देवता के प्रसङ्ग में यह बदल जाता है। जैसे '**भैरव**' के लिए है–**ॐ ह्सौः**।

(२) **जिह्वा-शोधन–अभीष्ट एकाक्षर बीज** तीन बार, **प्रणव** (**ॐ**) तीन बार, पुनः **एकाक्षर बीज** तीन बार–इस प्रकार बने **नवाक्षर मन्त्र** का सात बार जप करे।

(३) **मन्त्र-शोधन**–'**अशौच**' को दूर करने के लिए '**मूल-मन्त्र**' को **प्रणव** (ॐ) से **पुटित** कर जप करना चाहिए। '**जन्म**' और '**मृत्यु**'–जन्य अशौच के अवसर पर **मन्त्र की अशुद्धता** के सम्बन्ध में देखिए '**तन्त्रसार**'।

(४) **कुल्लुका**– देखिए '**शारदा-तिलक तन्त्र**'। '**कुल्लुका**' का जप–सिर पर किया जाता है। यथा–कालिका की '**कुल्लुका**'–'**माया**'-बीज अर्थात् '**ह्रीं**' है।

(५) **निर्वाण**–'**मणिपुर-चक्र**' में **मातृका-वीज से पुटित मूल-मन्त्र** का जप करे।

(६) सेतु–प्राय: महा-मन्त्र '**ॐ**' या माया-वीज '**ह्रीं**' ही '**सेतु**' माना गया है, किन्तु कहीं-कहीं इस नियम में अन्तर मिलता है। जैसे '**काली**' का सेतु, उन्हीं का वीज '**क्रीं**' है और '**तारा**' का '**कूर्च**' अर्थात् 'हूँ' है।

(७) निद्रा-भङ्ग–'ईं' से पुटित कर **मूल-मन्त्र** का सात बार जप करने से **मन्त्र की सुप्तावस्था** दूर होती है।

(८) मन्त्र-चैतन्य–'मणिपूर-चक्र' में मातृका-वीज (ह्सौ:) से पुटित मूल-मन्त्र का जप। **सहस्त्रार, अनाहत, मूलाधार** में 'हूं'-सहित मूल-मन्त्र का मनन।

(९) मन्त्रार्थ-भावना–मन्त्रार्थ या मन्त्र-गत मातृका का ध्यान करना, जिससे देवता का सारा शरीर बना है।

(१०) दीपनी, (११) प्राण-योग, (१२) योनि-मुद्रा–'**दीपनी**' में '**ॐ**' से अभीष्ट मन्त्र को सम्पुटित कर सात बार जप किया जाता है। जहाँ '**ॐ**' के स्थान पर '**ह्रीं**' का प्रयोग होता है, उसे '**प्राण-योग**' कहते हैं। '**योनि-मुद्रा**' का मतलब है–**योनि-वीज (ईं)** का दस बार जप करते हुए, मस्तक में '**गुरु**' का, हृदय में '**इष्ट-देवता**' का और तब **मूलाधार-चक्र से मस्तक तक योनि-रूपा भगवती** का ध्यान करना।

- '**मन्त्र**' ही '**देवता**' है अर्थात् '**परा-चित् -शक्ति**' ही **मन्त्र**-रूप में प्रकट होती है। **मन्त्र की** '**साधना-शक्ति**' से **मन्त्र चैतन्य** होता है। मूल रूप से **शक्ति** एक वही है, जो '**साधना-शक्ति**' और '**मन्त्र-शक्ति**'–इन दो रूपों में लक्षित होती है।

सर्व-शक्ति-मयी 'मन्त्र-शक्ति'

- '**मन्त्र-शक्ति**'–विशेष ओजस्विनी होती है। **साधक की चेतना का मन्त्र-रूपा चित्-शक्ति** से **ऐक्य-सम्बन्ध** स्थापित होता है और भक्ति से निर्मल तथा प्रकाशित साधक के मानस के समक्ष **मन्त्रार्थ-रूप देवता** प्रत्यक्ष हो जाता है।
- '**मन्त्र**' का सार यद्यपि '**चित्-शक्ति**' है, तथापि '**साधना-शक्ति**' का **मन्त्र-शक्ति** से मिलाप हुए बिना साधक को उसकी अनुभूति नहीं होती। **पूजा, ध्यान** और दूसरी साधनाओं में केवल साधक की **साधना-शक्ति** ही काम करती है, जब कि '**मन्त्र-साधना**' में '**साधना-शक्ति**', '**मन्त्र-शक्ति**' से मिलकर क्रिया-शील होती है।
- '**मन्त्र-शक्ति**'–**सर्व-शक्ति-मयी** है और वह '**साधना-शक्ति**' को, जो अपूर्ण रहती है, सामर्थ्य प्रदान करती है तथा **विघ्नों का सामना** करती है। '**व्यक्ति-गत शक्ति**' अग्नि के समान है। जिस प्रकार वायु की तरङ्गें, जब अग्नि की लपटों को थपेड़े-पर-थपेड़े देती हैं, तब वे और प्रचण्ड हो जाती हैं, उसी प्रकार साधक की '**व्यक्ति-गत शक्ति**' को जब '**मन्त्र-शक्ति**' का धक्का लगता है, तब वह शीघ्रता से विकसति होने लगती है।

✦ एक सशक्त क्रिया-शील '**व्यक्ति-गत शक्ति**' के सम्पर्क से **मन्त्र-शक्ति** दूनी प्रबलता प्राप्त करती है। '**मन्त्र**' में प्रबल शक्ति होने से ही जीव असम्भव को भी सम्भव कर सकता है। अन्यथा जीव उस निधि को अपने प्रयत्न से प्राप्त नहीं कर पाता, जिसकी उपासना **शिव** तक करते हैं। '**मन्त्र**' की सहायता से '**जैवी शक्ति**' अर्थात् '**जीव की शक्ति**'-'**दैवी शक्ति**' में रूपान्तरित हो जाती है, जिससे वह **दैवी कार्य** को भी सम्पन्न कर सकता है।

✦ '**मन्त्र**'-**दिव्य माँ का एक विशेष स्वरूप** है और वह **पराम्बा की भक्ति** के द्वारा '**मन्त्र-साधना-शक्ति**' से जीव में प्रकट होता है। इसी से कहा गया है -''......'**अ**' से '**क्ष**' **तक के पचास वर्णों या मातृकाओं की माला अमर है, अनादि है, अनन्त है और साक्षात् ब्रह्म है।**'' यह महद् उक्ति ही समस्त **तन्त्रों** का आदि है। इस '**मन्त्र-चेतना**' की अनुभूति ही '**मन्त्र-सिद्धि**' है।

✦ कोई साधक यदि केवल एक '**मन्त्र**' में भी पूर्ण सिद्धि प्राप्त कर लेता है, तो सारे **वेदों** के पढ़ने से जो **आध्यात्मिक ज्ञान** मिलता है, वह उसका स्वामी हो जाता है क्योंकि '**ईश्वर-शरीर**' में स्थित '**कुल-कुण्डलिनी**' की ध्वनि का परिणाम ही '**वेद**' हैं।

✦ **देवता** का प्रत्यक्ष होना सत्य हो या न हो, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि '**मन्त्र**' के उच्चारण मात्र से किसी फल की सम्भावना पर विश्वास करना केवल अन्ध-विश्वास ही है। न यही कहना ठीक है कि '**मन्त्र-जप**' किसी शब्द का व्यर्थ और मूर्खता-पूर्ण दुहराना मात्र है। ऐसा कहनेवाले वास्तव में '**मन्त्र**' के सम्बन्ध में कुछ जानते ही नहीं हैं। केवल मनमानी बातें करते हैं, जिसके लिए उन्हें लज्जित ही होना पड़ता है।

'मन्त्र-विद्या' का महत्त्व

✦ '**बुद्धि-वादी**' लोग '**मन्त्र-विद्या**' को **जादू-टोना** बतलाकर, उसका उपहास किया करते हैं, परन्तु यह उनका अज्ञान है। वे जानकर भी जानना नहीं चाहते कि यह विद्या ही **विश्व का रहस्य** है।

✦ जिनको अपौरुषेय '**वेदों**' और '**तन्त्र-विद्या**' पर विश्वास है, वे **मन्त्रों के रहस्य** को जानते हैं। '**वेद-विद्या**' तथा '**तन्त्र-विद्या**' का मेरु-दण्ड '**मन्त्र-विद्या**' ही है। हमारे प्राचीन-तम जिन पूर्वजों को '**वेद-विद्या**' तथा '**तन्त्र-विद्या**' प्राप्त हुई थी, वे रहस्यमयी '**मन्त्र-विद्या**' से भले प्रकार अवगत ही नहीं थे, अपितु उन्होंने उसकी साधना में पूर्ण सफलता भी पाई थी।

✦ यदि '**मन्त्र-विद्या**' की साधना **शास्त्र-विधि** के अनुसार ठीक-ठीक की जाए, तो हमारा देश पहले ही की तरह गौरवान्वित हो सकता है। पहले ही की तरह **पुरुषार्थ** तथा **सुख** और **समृद्धि** से परिपूर्ण होकर वह पहले जैसा स्वर्गोपम बन सकता है, परन्तु आज का हमारा '**बुद्धि-वाद**', हमें द्रुत गति से **योरप**, **अमरीका** के उस प्रबल '**विज्ञान-वाद**' की ओर खींचे लिए जा रहा है, जिसने स्वयं अपने जन्म-दाता को ही मृत्यु-शिला पर ला पटका है! खेद है, हमारे '**बुद्धि-वादी**'-योरप-अमरीका के विज्ञान के इस भीषण परिणाम को देख नहीं पा रहे हैं।

'मन्त्र-शास्त्र' का तात्पर्य

✦ दैवी राज्य से सम्बन्ध युक्त शब्द को '**मन्त्र**' कहते हैं। '**मन्त्रों**' में '**भगवान-नाम-वाचक मन्त्र**' सर्व-श्रेष्ठ होते हैं। **पूज्य-पाद महर्षियों** ने कहा है कि **सर्व-शक्तिमान् श्रीभगवान्** का सबसे बड़ा आदि-वाचक नाम-'**प्रणव**' (ॐ) है। '**प्रणव**'-त्रिगुणात्मक है। इसमें सृष्टि-कर्त्ता '**ब्रह्मा**', सृष्टि-पालक '**विष्णु**' और मुक्ति-दाता '**शिव**'-विद्यमान हैं। इस कारण '**प्रणव**' का **जप** करने और उसके **अर्थ की भावना** करने से साधक **भगवान् के चरण-कमलों** तक पहुँच जाता है।

✦ जैसे '**प्रणव**'-**परमात्मा का वाचक** होने के कारण **भगवान् के चरण-कमलों** में पहुँचा देता है, वैसे ही **मन्त्र**-शास्त्रोक्त नाना '**बीज-मन्त्र**' भी-दृश्य और अदृश्य रूप दोनों से सम्बन्ध कराकर, **तत्तत् बीज से सम्बन्ध-युक्त दैवी-शक्तियों के निकट** साधक को पहुँचा देते हैं। **दर्शन-शास्त्र** से भी सिद्ध है कि **अन्तःकरण- विश्व का माध्यम** है और वह **योग-युक्त** तथा **समाहित** होने से **विश्व-ब्रह्माण्ड** के कोने-कोने में पहुँच सकता है।

✦ '**मन्त्र-शास्त्र**' जैसे गहन विषय को समझने के लिए **अन्तः-करण के स्वरूप, शक्ति और व्यापकता** पर विचार करने की आवश्कता है। **अन्तः-करण** के चार भेद हैं-**१. मन, २. बुद्धि, ३. अहङ्कार** और **४. चित्त**। चारों मिलकर '**अन्तः-करण-चतुष्टय**' कहलाते हैं। **भगवान् ब्रह्मा** अन्तः-करण के प्रधान **अधिदैव** हैं। **अन्तः-करण**-चार विभागों में विभक्त होने से ही **ब्रह्मा-चतुर्मुख** कहलाते हैं। **अन्तः-करण** के चार विभागों में से '**बुद्धि**' और '**मन**'-मुख्य हैं तथा '**चित्त**' और '**अहङ्कार**'-गौण हैं। **इन्द्रियों** को जो चलाता है, वह **इन्द्रिय-राज** '**मन**' है और **सद्-विचार** के अनुसार जो '**मन**' को समाहित करती है, वह '**मन**' की गुरु-'**बुद्धि**' है। नाना **वृत्तियों** द्वारा जो '**मन**' को नचाता है, वह '**चित्त**' कहलाता है, प्रत्येक जीव-पिण्ड में **स्वतन्त्र व्यक्तित्व** स्थापन करके, **सर्व-व्यापक आत्म-तत्त्व** को जो आवृत करता है, उसको '**अहङ्कार**' कहते हैं। '**अहङ्कार**'-'**बुद्धि**' का अन्तर्विभाग है। बिना **अहङ्कार** के **बुद्धि** कार्य नहीं कर सकती । '**चित्त**' एक ऐसा तत्त्व है, जिसमें **स्मृति** भी रहती है। **पूर्व स्मृति** के अनुसार '**चित्त**'-नाना विषयों को लाकर '**मन**' को नचाया करता है। इसी से **मन** एक क्षण भी **निश्चल** नहीं रहता, **चञ्चल** बना रहता है।

✦ '**मन्त्र-शास्त्र**' के साथ **अन्तः-करण** का बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी कारण '**तन्त्र-शास्त्र**' में कहा है कि '**मन**' का जो त्राण करे, वही '**मन्त्र**' है। '**मन्त्र**' में जो शक्ति निहित रहती है, वह शक्ति '**मन्त्र**' के आश्रय से **अन्तः-करण** में प्रकट हो जाती है। जिस प्रकार लकड़ी में अग्नि रहती है, परन्तु अरणी के द्वारा मथी जाने से ही प्रकट होती है, उसी प्रकार **योग-युक्त अन्तः-करण** में व्यवस्थित रूप से '**मन्त्र-जप**' होने से '**मन्त्र-शक्ति**' प्रगट होकर कार्य करने लगती है।

✦ निर्गुण '**प्रणव**' (ॐ) मन्त्र हो, अथवा **सगुण शक्ति-बीज** (स्त्रीं), **माया-बीज** (ह्रीं) आदि हो अथवा **शाखा-पल्लव** से युक्त '**मन्त्र**' हो-सबमें उस **मन्त्र-सम्बन्धी सर्व-शक्ति** विद्यमान रहती है।

✦ **वैदिक मन्त्र** और **लौकिक शाबर मन्त्र**–दोनों के विनियोग में **शक्ति-विकास** का **तारतम्य** रहता है। **वेदोक्त** और **तन्त्रोक्त अलौकिक मन्त्रों** को सिद्ध करने में अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वे **स्वतः-सिद्ध अनादि मन्त्र** हैं। **निष्काम साधक** को इन मन्त्रों से लाभ उठाने के लिए विशेष परिश्रम नही करना पड़ता, परन्तु **साकार-रूप** से **सिद्धि** प्राप्त करने के लिए विशेष परिश्रम की आवश्यकता होती है।

✦ **अन्तः-करण–सर्व-व्यापक** और **योग-युक्त** होने से सब जगह काम कर सकता है। इसका प्रधान कारण यह है कि **पिण्ड** तीन प्रकार के होते हैं–१. उद्भिजादि सहज-पिण्ड, २. नाना अधिकारों के **पूर्णावयव जीव-रूपी मनुष्य-पिण्ड** और ३. **नाना श्रेणी के देवताओं के देव-पिण्ड**। **देव-पिण्डों में भूत-प्रेतादि और दानव-असुरादि पिण्ड** भी आ जाते हैं। **अन्तः-करण–सर्व-व्यापक** होने से वह इन सब पिण्डों में विद्यमान् है। अतः साधक यदि शक्ति-शाली हो और उसका **अन्तः-करण–योग-युक्त** हो, तो वह **चतुर्दश भुवनों** के सब स्थानों और पिण्डों में–**'मन्त्र-बल'** से बलवान् होकर कार्य कर सकता है। यही **'मन्त्र-शास्त्र'** का तात्पर्य है और यह **अधि-दैव-बल विधि-पूर्वक 'जप'** द्वारा प्राप्त हो सकता है। **तन्त्र-शास्त्रों** में **'जप'** की अनेक प्रकार की विधियाँ पाई जाती हैं, जो **विश्वास, श्रद्धा, गुरु-सेवा, अन्तः-करण–शुद्धि, बहिः-शुद्धि और दैवी-जगत् पर पूर्ण निर्भर** रहने से सफल होती हैं।

मनन करने योग्य बातें

जितने भी भौतिक, दैविक और आध्यात्मिक रहस्य हैं, वे सब ज्ञानात्मक ही हैं। उनका प्रकाशन शब्दात्मक ग्रन्थों, मन्त्रों द्वारा ऋषियों, आचार्यों, साधु-सन्त-महात्माओं ने किया है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र का ठीक अभ्यास होने पर शुद्ध सात्त्विक तत्त्व साधक के सम्मुख प्रकट होता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' का 'मन्'–मनन से और 'त्र'–त्राण अर्थात् संसार-बन्धन के मोक्ष से निकला है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र'–वर्णों से बनता है। वर्ण और उनके पारस्परिक संयोग से बने अक्षर और शब्द–ये सभी व्यक्त शब्द के स्वरूप हैं अर्थात् ब्रह्म-रूप हैं।

❀ ❀ ❀

किसी देवता का मन्त्र वह 'वर्ण' या 'वर्णों की योजना' है, जो उस देवता को साधक की चेतना के सम्मुख प्रत्यक्ष करता है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र का स्वरूप

मन्त्र-रहस्य

नित्य सनातन वर्णात्मक शब्द

वैदिक मन्त्र

तान्त्रिक मन्त्र

मन्त्र-शोधन

मन्त्र-दोष-निवारणार्थ उपाय

मन्त्रों के दस संस्कार

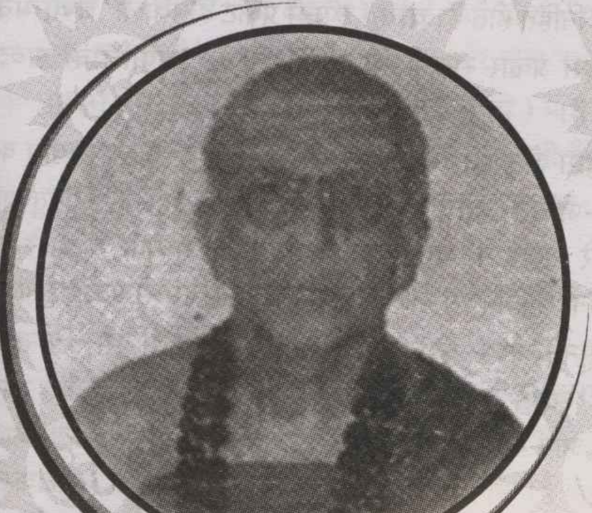

मन्त्र त्याग-विधि

'मन्त्र' और 'देवता' की एकता

'कुल-मार्तण्ड' पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री

'मन्त्र' अर्थात् 'शब्दात्मक शक्ति'

- '**मन्त्र**' का विषय लोगों को जितना अधिक अपनी ओर आकर्षित करता है, उतना ही कम उसके सम्बन्ध में समझा जाता है। साधारणतया '**मन्त्र**' का अर्थ '**प्रार्थना**', **पूजा-कार्य में उपयोगी शब्द**', '**रहस्यात्मक वर्ण**' आदि कहा जाता है।
- '**मन्त्र**' एक प्रकार की **शक्ति** है, जिसका प्रयोग किसी भी दशा में, किसी भी रूप में सम्भव है। **मानव जीवन की रक्षा** और दूसरे चमत्कारी कर्म '**मन्त्र**' के प्रभाव से सम्पन्न हो सकते हैं। सारांश यह कि '**मन्त्र**' एक '**शब्दात्मक शक्ति**' है।
- '**मन्त्र**'-शब्द-'**मन्**'-धातु से बना है, जिसका अर्थ है-'**सोचना**'। विचार में निर्माण की क्षमता निहित है, इसे आधुनिक समाज ने भी स्वीकार किया है। '**विचार**'-'**मन**' की क्रिया है और '**मन**' ही की भाँति वह एक शक्ति है। '**मन्**'-धातु से ही '**मनुष्य**'-शब्द की रचना होती है और यह एक विदित बात है कि सारी सृष्टि में मनुष्य ही **विचार-शक्ति-सम्पन्न** प्राणी है।
- '**मन्त्र**'-**शब्द-ब्रह्म का प्रकट स्वरूप** है। इस प्रसङ्ग में यह जानना आवश्यक है कि **शब्द** है क्या? '**शब्द**'-**आकाश का गुण** है और **श्रवणेन्द्रिय** से वह अनुभव में आता है। उसके दो भेद हैं- **१. वर्णात्मक, २. ध्वन्यात्मक। ध्वन्यात्मक शब्द**-दो वस्तुओं के परस्पर टकराने से उत्पन्न होता है और उसका कोई अर्थ नहीं होता।

नित्य सनातन 'वर्णात्मक शब्द'

- '**वर्णात्मक शब्द**' में **अक्षर, पद** और **वाक्य** निहित होते हैं। **वाक्**-रूप में प्रकट होनेवाला '**वर्णात्मक शब्द**'-**नित्य सनातन** है। इसकी नित्यता इस प्रकार समझी जा सकती है कि '**वर्णात्मक शब्द**' अनुभव में आने से पूर्व भी अस्तित्व में रहते हैं।
- '**वर्णात्मक शब्द**' का अनुभव '**ध्वनि**' के द्वारा होता है। '**ध्वनि**'-कण्ठ, तालु एवं जिह्वा से वायु का सङ्घर्षण होने पर उत्पन्न होती है। '**सङ्घर्षण-जनित ध्वनि**'-'**वर्णात्मक शब्द**' नहीं है, अपितु यह उसके प्रागट्य में निमित्त भर होती है। दूसरे शब्दों में, वागेन्द्रियों के वायु के सम्पर्क में आने पर '**वर्णात्मक शब्द**'-**मानसिक क्रिया** या **भावना** के अनुरूप निर्मित '**ध्वनि**' के माध्यम से प्रकट होता है।
- '**वर्णात्मक शब्द**'-**वक्ता की इच्छा**-द्वारा सुनने योग्य '**ध्वनि**' में रूपान्तरित होता है। इस रूपान्तरण को '**अनित्य**' माना जा सकता है क्योंकि जो '**ध्वनि**' भावनाओं को भाषा में व्यक्त करती है, वह स्वयं अनित्य है, परन्तु '**वर्णात्मक शब्द**' अपने-आप में नित्य ही हैं। जिस समय इसे अनुभव किया जाता है, उसी समय इसकी उत्पत्ति होती हो, ऐसा नहीं है। अपितु उस समय '**ध्वनि**'-द्वारा उसका व्यक्तीकरण मात्र होता है। वह जिस प्रकार बाद में अनुभव में आता है, उसी प्रकार पहले भी वर्तमान रहता है।
- '**वर्णात्मक शब्द**' के रूपान्तरण को समझने के लिए, उस '**घट**' का दृष्टान्त दिया जा सकता है, जो किसी अँधेरे कमरे में रक्खा हो और जिसका व्यक्तीकरण एक '**दीपक**' के सहारे किया जाए। यहाँ यह

स्पष्ट है कि '**दीपक**' द्वारा प्रकाश में आने से पूर्व भी '**घट**' वहाँ विद्यमान था और दीपक के हट जाने पर भी वह वहीं वर्तमान रहेगा। इसी प्रकार **वागेन्द्रियों** के सम्पर्क में आकर वायु-'**शब्द**' को **वर्णाक्षरों** के रूप में प्रगट करती है। उन्हीं **अक्षरों** से शब्दों और वाक्यों का निर्माण होता है। बोलने की इच्छा से व्यक्ति प्रयत्न करता है और '**वर्णात्मक अक्षरों**' का जन्म होकर सुनने योग्य '**शब्द**' अस्तित्व में आता है। इस विवरण से स्पष्ट है कि ध्वनि उक्त '**दीपक**' के समान **शब्द-रूपी** '**घट**' को प्रकाश में लाने का साधन मात्र है और '**ध्वन्यात्मक शब्द**' से '**वर्णात्मक शब्द**' का निरालापन स्पष्ट प्रतीत हो जाता है।

'वर्णात्मक शब्द' के चार रूप

- '**वर्णात्मक शब्द**' के चार रूप हैं-१. **परा**, २. **पश्यन्ती**, ३. **मध्यमा** और ४. **वैखरी**।
- '**परा**'-शब्द-शरीर के '**मूलाधार-चक्र**' में **कुण्डलिनी** में अवस्थित है। यह निष्क्रिय '**मूल शब्द**' है। जब इसमें सामान्य '**स्पन्द**'-रूप क्रिया-शीलता आती है, तब यह '**पश्यन्ती**'-रूप ग्रहण कर लेता है।
- '**पश्यन्ती**'-शब्द की स्थिति-'**मूलाधार-चक्र**' से '**मणिपुर-चक्र**' तक व्याप्त है। इस स्थिति में '**शब्द**' का सम्पर्क '**मन**' से होता है-'**मणिपुर-चक्र**' से लेकर **हृदय** तक शब्द के '**मध्यमा**'-**रूप** की अनुभूति होती है।
- '**मध्यमा**' के बाद '**शब्द**' अपने अन्तिम रूप '**वैखरी**' में **प्रकट होता है, जो उच्चारित वाक्-रूप है।** यह गले से उद्भूत होकर, **मुख से निकलता है और उसे श्रोता कानों से सुनता है।**
- '**शब्द**' का '**मध्यमा**'-**रूप-मानसिक क्रिया या भावना है,** जिससे प्रेरणा पाकर '**शब्द**' के '**वैखरी**'-रूप या '**वाणी**' की उत्पत्ति होती है। इन दोनों-'**मध्यमा**' और '**वैखरी**'-रूपों को मूल प्रेरणा '**शब्द**' के '**पश्यन्ती**' रूप से मिलती है, जो और कुछ नही, '**परा-शब्द**' की सामान्य क्रिया-रूपी अवस्था है।
- **सूक्ष्म (परा)** और **कारण-रूप (पश्यन्ती)** में शरीर में अन्तर्हित '**वाक्**'-मानसिक क्रिया **(मध्यमा)** के सहयोग से '**भाषा**' **(वैखरी)** को जन्म देती है अर्थात् अन्तः-स्थित मानसिक क्रिया '**मन्त्र**' अथवा '**शब्द**' के सूक्ष्म स्वरूप को और उच्चारित शब्द-ध्वनि '**मन्त्र**' अथवा '**शब्द**' के स्थूल-स्वरूप को व्यक्त करती है।
- **स्थूल शब्द** या '**वैखरी**' या उच्चारित शब्द और उसके द्वारा व्यञ्जित स्थूल पदार्थ-**सूक्ष्म शब्द** एवं **अर्थ** की कृति मात्र हैं। यह कृति **शब्द-ब्रह्म** द्वारा, स्थूल ऐन्द्रिय अनुभव-जगत् में, सञ्चारित क्रिया से अस्तित्व में आती है। अतएव स्थूल भौतिक संसार में '**शब्द**' का अर्थ है-'**भाषा**' अर्थात् वाक्य, शब्द और वर्ण, जो **भावों के द्योतक** और '**मन्त्र**' होते हैं।
- **सूक्ष्म या मानसिक जगत्** में '**मध्यमा शब्द**'-'**मन**' है, जो **नाम-करण** करता है-साथ ही, अर्थ भी। वही '**मन**' है, जो **अनुभूत स्वरूप** को व्यक्त करता है। यह '**मन**' की **बाह्य अवस्था** का परिचायक माना गया है। इस बात को और अच्छी तरह से समझने के लिए यह तुलना विचारणीय है कि '**परा**'-शब्द यदि '**सुषुप्ति**' है, तो '**मध्यमा**'-शब्द-'**स्वप्न**' है और '**वैखरी**'-शब्द है-'**जाग्रदवस्था**'।

- **मानसिक 'अर्थ'**–एक प्रकार का '**संस्कार**' है। इस संस्कार को उत्पन्न करनेवाला और कोई नहीं, किसी विशेष अर्थ का स्थूल या सूक्ष्म '**नाम**' ही होता है। यथा–'**घट**'-पद का उच्चारण होने पर, मन में घड़े की आकृति उत्पन्न होती है।
- **हिन्दू अध्यात्म-विज्ञान** के अनुसार '**चेतना**' की '**हिरण्य-गर्भ**' अवस्था में **संस्कार-रूप शब्दों** से ही **मनो-मय कोष** का जन्म हुआ। इस प्रकार सम्पूर्ण संसार–'**शब्द**' (नाम) और '**अर्थ**' (रूप) में विभाजित है।
- '**शब्द**' और '**अर्थ**' में अखण्ड सम्बन्ध है। **अर्थ-हीन** कोई '**शब्द**' नहीं होता और **शब्द-हीन** कोई '**अर्थ**' नहीं होता। अतएव **शब्द-सृष्टि** से सुने जानेवाले शब्दों या शब्द के बाह्य स्वरूप से तात्पर्य है और **अर्थ-सृष्टि** से मन द्वारा अनुभूत या इन्द्रियों से देखे गए अर्थ से तात्पर्य है।
- **मानसिक अर्थ**–स्थूल अर्थ का पूर्व-स्वरूप होता है। संक्षेप में, '**मन्त्र**' अर्थात् शब्द (नाम) एवं **अर्थ** (रूप) की अनेक विविधताएँ संसार में विद्यमान हैं और सम्पूर्ण संसार इन्हीं से रचा-बसा है।

'मन्त्र' का अर्थ गोप्य अथवा रहस्य-पूर्ण विचार

- '**मन्त्र**'-शब्द–'**मन्त्र गुप्त परि-भाषणे**' धातु पर '**न्**' प्रत्यय लगाने से सिद्ध होता है। **व्याकरण** के अनुसार यह **संज्ञा** तथा **पुल्लिङ्ग** है। इसका अर्थ **गोप्य अथवा रहस्य-पूर्ण विचार** है।
- '**मन्त्र**' पाँच प्रकार के होते हैं–**१. वैदिक, २. तान्त्रिक, ३. पौराणिक, ४. शाबर** और **५. प्रकीर्णक**। यज्ञादि क्रिया करने के विधान-बोधक, देवादि-साधन '**गायत्री**' आदि '**वैदिक वाक्य**' भी '**मन्त्र**' कहलाते हैं।

१. वैदिक मन्त्र

- '**निरुक्त**' के अनुसार '**वैदिक मन्त्र**'–**१. परोक्ष-कृत, २. प्रत्यक्ष-कृत** तथा **३. आध्यात्मिक भेद** से तीन भावों में बाँटे गए हैं।
- **परोक्ष-कृत मन्त्रों में देवता को परोक्ष** मानकर, '**प्रथम**'-पुरुष की क्रियाओं के प्रयोग के द्वारा स्तुति की जाती है।
- **प्रत्यक्ष-कृत मन्त्रों में देवता को प्रत्यक्ष** मानकर, '**मध्यम**'-पुरुष के सर्व-नाम और क्रिया का प्रयोग कर स्तुति करते हैं।
- **आध्यात्मिक मन्त्रों में देवता का आरोप अपने में करके**, '**उत्तम**'- पुरुष के सर्व-नाम और क्रिया के द्वारा स्तुति करने का विधान है।
- **परोक्ष, प्रत्यक्ष एवं आध्यात्मिक मन्त्रों** के विषय प्रायः–**स्तुति, आशीर्वाद, शपथ, अभिशाप,** और **निन्दा** आदि होते हैं।
- '**मीमांसा**' के मतानुसार–जिस '**वेद-वाक्य**' के द्वारा किसी कर्म के करने की प्रेरणा पाई जाती है, वह '**मन्त्र**'-पद-वाच्य है। '**मीमांसा**'-शास्त्र के प्रवर्तक, **आचार्य महर्षि जैमिनि** केवल **मन्त्र** को ही **देवता** मानते हैं, **मन्त्र** के अतिरिक्त **देवता** नहीं मानते।

✦ '**वैदिक-मन्त्र**'–गद्य और **पद्य** दोनों रूपों में पाए जाते हैं। **गद्य** को '**यजु**' कहते हैं और '**यजु**' की ही प्रधानता से '**यजुर्वेद**' कहलाता है। **पद्य** को '**ऋक्**' (**ऋचा**) कहते हैं और ऋचाओं की प्रधानता के कारण पद्य भाग–वाले मन्त्रों की संज्ञा '**ऋग्वेद**' हुई है। जो **पद्य** गाए जाते हैं, उन्हें '**साम**' कहते हैं। साम–प्रधान भाग '**साम-वेद**' के नाम से व्यवहृत होता है। इन्हीं तीन प्रकार के मन्त्रों के द्वारा **यज्ञ के सर्व कर्म** सम्पादित होते हैं।

✦ वेदों का वह भाग, जिसमें मन्त्रों का संग्रह है (**मन्त्र-संहिता**), '**मन्त्र**'–शब्द से कहा जाता है। '**मन्त्र**' और '**ब्राह्मण**'–दोनों का नाम–'**वेद**' है। अतएव '**निरुक्तकार**' कहते हैं कि–"**मन्त्र-ब्राह्मणयोर्वेद नामधेयम्**"।

२. तान्त्रिक मन्त्र

✦ '**तन्त्र-शास्त्र**' के अनुसार–'**मन्त्र**' उन शब्द या वाक्यों को कहते हैं, जिनका '**जप**' भिन्न–भिन्न **देवताओं की प्रसन्नता** अथवा **भिन्न-भिन्न कामनाओं की सिद्धि** के लिए करने का विधान है।

✦ **तान्त्रिक** लोग '**मन्त्र**'–शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार करते हैं–'**मननात् त्रायते इति मन्त्रः**' अर्थात् जो **मनन करने से भक्त की रक्षा** करता है।

✦ '**मन्त्र**'–शब्द के '**मन्**' और '**त्र**' इस प्रकार दो टुकड़े करके '**कुलार्णव**' के दशमोल्लास में निम्न प्रकार से व्युत्पत्ति की गई है–

मननात् तु स्वरूपस्य, वेदस्यामित-तेजसः। त्रायते सर्व-भयतस्तस्मान्मन्त्र इतीरितः।

अर्थात् **अमित प्रभावशाली** '**वेद**' के सार–रूप का जिसमें **मनन** है और जो संसार के **आवागमनादि सम्पूर्ण भयों से रक्षा** करता है, उसे '**मन्त्र**' कहते हैं।

✦ **कौलिक-प्रवर श्री भासुरानन्दनाथ (श्री भास्कर राय भारती)** '**श्रीललिता-सहस्र-नाम**' की व्याख्या में लिखते हैं कि '**संसार-क्षय-कृत्-त्राण-धर्मतो मन्त्र उच्चते।**' अर्थात् **सांसारिक आवागमनादि भयों का नाश** करके '**मन्त्र**'–**भक्त की रक्षा** करता है, अतः वह '**मन्त्र**' कहलाता है।

✦ '**मन्त्र**'–शब्द '**मनु अवबोधने**' तथा '**त्रैङ् पालने**' (रक्षा करना)–दो धातुओं से बना है तथा '**मन्त्रि गुप्त-परि-भाषणे**'–धातु से भी बना है। अतएव इसका अर्थ '**गुह्य रहस्य**' भी है।

✦ एकाक्षरवाले मन्त्र–'**पिण्ड**', दो अक्षरवाले–'**कर्त्ता**', तीन से नौ अक्षरवाले–'**बीज**', दश से बीस अक्षर-पर्यन्त–'**मन्त्र**' और बीस से अधिक अक्षर जिन मन्त्रों में हों, वे '**माला**' कहलाते हैं। यथा–

मन्त्रा एकाक्षरा पिण्डाः, कर्तृयोः द्व्यक्षरा मताः। वर्ण-त्रयं समारभ्य, नवार्णावधि बीजकाः।।
ततो दशार्णमारभ्य, यावद् विंशति-मन्त्रकाः। तत ऊर्ध्वे गता मालास्तासु भेदो न विद्यते।।

✦ **विष्णु**, **शिव**, **गणपति** और **सूर्य** आदि देवताओं के मन्त्रों को '**मन्त्र**' तथा दश-महा-विद्याओं और अन्य शक्तियों के मन्त्रों को '**विद्या**' कहते हैं। कहा भी है–'**पुं दैवत्यः मन्त्राः, स्त्री दैवत्या विद्या**' इति। अर्थात् '**पुरुष**' देवतावाले मन्त्र–'**मन्त्र**' तथा '**स्त्री**'-देवतावाले मन्त्र–'**विद्या**' कहलाते हैं।

स्त्री पुं-नपुंसकाः प्रोक्ताः, मनवस्त्रि-विधा बुधैः। वषड् नमः फडन्ताश्च, पुमांसो मनवः स्मृताः।।
वौषट्-स्वाहान्तगा नार्यः, हुँ नमोऽन्ता नपुंसकाः ।। (कुलागम)

अर्थात् 'मन्त्र'-१. स्त्री, २. पुरुष और ३. नपुंसक के भेद से तीन प्रकार के होते हैं। जिन मन्त्रों के अन्त में 'वषट्' और 'फट्' आता है, वे 'पुरुष-मन्त्र' हैं। जैसे 'ॐ हुँ फट्'-इस मन्त्र के अन्त में फट् आया है। जिन मन्त्रों के अन्त में 'वौषट्' अथवा 'स्वाहा' आता है, वे 'स्त्री-मन्त्र' हैं। यथा-'ॐ ह्रीं भगवती माहेश्वरी अन्नपूर्णा स्वाहा'-इस मन्त्र के अन्त में 'स्वाहा' आया है। जिन मन्त्रों के अन्त में 'हुँ' अथवा 'नमः' आता है, वे मन्त्र 'नपुंसक' हैं। जैसे 'रां रामाय नमः', 'ह्रीं शिवाय नमः'-इन मन्त्रों में 'नमः' आया है।

मन्त्रों का शोधन

- 'मन्त्र'-ग्रहण करने से पूर्व गुरु-द्वारा 'मन्त्र-शोधन' अत्यन्त आवश्यक है। 'मन्त्र' का संशोधन निम्न-लिखित षट्-चक्रों द्वारा होता है-१. सिद्धयादि-चक्र, २. ऋण-धन-शोधन-चक्र, ३. तारा-चक्र, ४. राशि-चक्र, ५. अकडम-चक्र और ६. पञ्च-भूत-चक्र।
- प्रथम चक्र सिद्धयादि-चक्र में-सोलह कोष्ठ होते हैं और इन कोष्ठों में मातृकाएँ विशेष क्रम से लिखी जाती हैं। इन सोलह कोष्ठों में चार-चार कोष्ठों के चार केन्द्रों के नाम-१. सिद्ध, २. साध्य, ३. सु-सिद्ध और ४. अरि होते हैं। साधक के नाम का अक्षर और मन्त्र का अक्षर यदि एक कोष्ठ में हों, तो 'सिद्ध-सिद्ध' कहलाता है। यदि साधक नामाक्षर-कोष्ठ से मन्त्राक्षर दूसरे कोष्ठ में हो, तो 'सिद्ध-साध्य', तृतीय में हो, तो 'सिद्ध सु-सिद्ध' और चतुर्थ में हो, तो 'सिद्धारि' कहा जाता है। इसी क्रम से पुनः साध्य-सिद्ध, साध्य-साध्य, साध्य-सु-सिद्ध और साध्यारि होते हैं। पुनः सु-सिद्ध-सिद्ध, सु-सिद्ध-साध्य, सु-सिद्ध-सु-सिद्ध और सु-सिद्धारि होते हैं। पुनः अरि-सिद्ध, अरि-साध्य, अरि सु-सिद्ध और अरि-अरि-इस प्रकार सोलह कोष्ठों के सोलह भेद होते हैं।
- इनमें 'सिद्धारि-मन्त्र' बान्धवों को, 'साध्यारि' वंशजों को, 'सु-सिद्धारि' कुटुम्ब को, 'अरि-सिद्ध' पुत्र को, 'अरि-साध्य' कन्या को, 'अरि-सु-सिद्ध' पत्नी को और 'अरि-अरि मन्त्र' साधक को नष्ट करता है, अतः ये निषिद्ध हैं। यही सब बातें 'मन्त्र-महोदधि' तथा 'तन्त्र-सार' आदि ग्रन्थों में विस्तार-पूर्वक लिखी हैं।
- 'सिद्ध-सिद्ध' मन्त्र उत्तम होता है। मन्त्र-जप में संख्या नियत रहती है कि अमुक मन्त्र का इतना जप करना होगा, तब सिद्ध होगा। जैसे 'गायत्री' का बयालीस (४२) लक्ष, 'बगलामुखी' का एक लक्ष जप करने से सिद्धि होती है। 'सिद्ध-सिद्ध' मन्त्र मिलने पर जप हेतु जितनी संख्या कही गयी है, उतने संख्या में ही जपने पर सिद्धि मिल जाती है, 'सिद्ध-साध्य' मन्त्र मिलने पर नियत संख्या से द्वि-गुणा जप से सिद्धि होती है। 'सिद्ध-सु-सिद्ध' मन्त्र मिलने पर नियत संख्या के आधे जपने पर ही सिद्धि प्राप्त हो जाती है। यथा-

सिद्ध-सिद्धो यथोक्तेन, द्वि-गुणान् सिद्ध-साध्यकः। सु-सिद्ध-सिद्धोऽर्ध-जपात्।

✦ '**सिद्धारि-चक्र**' की अन्य रीतियाँ भी हैं, परन्तु सब रीतियों का लक्ष्य **मन्त्र की शुद्धता** ही है, अतएव एक ही प्रकार से कार्य सिद्ध हो जाता है।

✦ दूसरे '**ऋण-धन-शोधन-चक्र**' में, **मन्त्र–ऋणी** है या **धनी**–यह बात देखी जाती है। **मन्त्र का ऋणी होना**–अच्छा माना गया है और **धनी होना**–बुरा। '**ऋणी-मन्त्र**'–शीघ्र सिद्धि को देनेवाला होता है, '**धनी-मन्त्र**' की सिद्धि के लिए बहुत बड़ी सेवा की आवश्यकता होती है।

ऋणित्वात् प्राप्ति-मात्रेण, मन्त्रोऽभीष्टं प्रयच्छति। धनी-मन्त्रस्तु सम्प्राप्तः, फलत्यधिक-सेवया।।

✦ तृतीय '**तारा-चक्र**' में, **साधक के जन्म-नक्षत्र** से अथवा नाम **के नक्षत्र** से, **मन्त्र के आद्यक्षर के नक्षत्र** के साथ '**तारा-चक्र**' का शोधन होता है। इनमें **जन्म, सम्पद, क्षेम, साधक, मैत्री** और **परम मैत्री**–उत्तम होती हैं और **विपद्, वध** तथा **प्रत्यरि**–निकृष्ट होती हैं, अतएव त्याज्य हैं।

✦ चतुर्थ '**राशि-चक्र**' में, **साधक की राशि** से **मन्त्र के प्रथमाक्षर**-पर्यन्त '**राशि-चक्र**' का शोधन किया जाता है।

✦ पाँचवें '**अकडम-चक्र**' में भी **साधक के** नाम **के पहले अक्षर** और '**मन्त्र**' **के पहले अक्षर** से विचार किया जाता है।

✦ छठवें '**पञ्च-भूत-चक्र**' में **मन्त्र के आद्यक्षर** तथा **साधक के नामाक्षर की मैत्री का विचार** होता है। इस प्रकार '**षट्-चक्र-शुद्धि**' ठीक होने पर ही **मन्त्र** को ग्रहण किया जाता है।

'मन्त्र' के दोष के निवारणार्थ अन्य उपाय

✦ यदि षट्-चक्रों के अनुसार '**मन्त्र-शुद्धि**' ठीक न हो, तो **मन्त्र के दोष-निवारणार्थ**, मन्त्र के आगे '**माया-बीज**' (**ह्रीं**), '**काम-बीज**' (**क्लीं**) और '**श्री-बीज**' (**श्रीं**) लगा देने चाहिए। इनके लगाने से '**मन्त्र**' का दोष दूर हो जाता है।

✦ यदि **मन्त्र–एक** अथवा **दो** या **तीन अक्षरों** का है, तो **तीन अक्षरों** तक के मन्त्रों के लिए '**सिद्ध-साध्य**' आदि कोष्ठों को नहीं देखना चाहिए। **तीन से अधिक अक्षरोंवाले मन्त्रों** के लिए अवश्य देखना चाहिए। अथवा **मन्त्र** को '**प्रणव**' (**ॐ-कार**) से सम्पुटित कर देने से भी **मन्त्र निर्दोष** हो जाता है–

अनेकधा शोधने चेत्, शुद्धो न प्राप्यते मनुः। मायां कामं श्रियं चैव, दद्यात तद्-दोष-शान्तये।।
एक-द्वि-त्रिक-वर्णानां, साध्यादीन् नैव शोधयेत् । यदा दुष्टो मनुर्जप्तः, सिध्येत् प्रणव-सम्पुटः।।
यत्र यस्य भवेद् भक्ति-विशेषः स मनूत्तमः। वैरि-कोष्ठमपि प्राप्तोऽभीष्टदस्तस्य जायते।।

अर्थात् जिस **मन्त्र** के ग्रहण करने में साधक की प्रबल इच्छा हो, वह उसके लिए **सर्व-श्रेष्ठ** मन्त्र है। यदि वह '**अरि-कोष्ठ-गत**' भी हो, तो साधक के लिए **मनोवांछित फल** देनेवाला होता है।

✦ कुछ ऐसे भी मन्त्र हैं, जिनके शोधन की आवश्यकता नहीं है। जैसे–**एक वर्णवाले** और **तीन, पाँच, छः, सात, नौ, ग्यारह, तीस अक्षरवाले मन्त्र, हंस-मन्त्र, वेद-मन्त्र, ॐ-कार, स्वप्न में प्राप्त मन्त्र, स्त्री से प्राप्त मन्त्र, माला-मन्त्र, नृसिंह-मन्त्र, सूर्य-मन्त्र, वाराह-मन्त्र, मातृका-मन्त्र,**

त्रिपुरा-मन्त्र, काम-मन्त्र, आज्ञा-सिद्धि (गणेश) मन्त्र, गरुड़-मन्त्र, बौद्ध-मन्त्र, जैन-मन्त्र आदि का संशोधन आवश्यक नहीं है।

'मन्त्र' के त्याग की विधि

✦ यदि साधक अज्ञानता के कारण दूषित मन्त्र ले लेता है और उसके बाद मन्त्र का दोष उसे विदित होता है, तो साधक को 'मन्त्र' त्याग देना चाहिए। त्यागने की विधि यह है कि मन्त्र को भोज-पत्र पर लिख कर, गुरूपदिष्ट मार्ग से उसकी पूजा कर, प्रातः उसे जल-पूर्ण कुम्भ में रखकर, किसी नदी अथवा तालाब या कूप में प्रवाहित कर दे और पुनः नवीन 'शुद्ध-मन्त्र' को ग्रहण करे।

मन्त्रों के दश संस्कार

✦ मन्त्रों में छिन्नत्वादि पचास दोष साधक की अज्ञानता से आ जाते हैं, अतः इन दोषों की शान्ति के लिए, 'पुरश्चरण' करने से पूर्व, 'मन्त्र' के निम्न-लिखित 'दश-संस्कार' करने नितान्त आवश्यक हैं–

जननं जीवनं पश्चात्, ताडनं बोधनं तथा। अथाभिषेको विमलीकरणाप्यायनं पुनः।
तर्पणं दीपनं गुप्तिर्दशैता मन्त्र-संस्क्रियाः।।

(१) जनन–स्वर्णादि के पात्र में 'मातृका-यन्त्र' लिखकर उससे मन्त्र का उद्धार करना चाहिए। इसको 'मन्त्रोद्धार' भी कहते हैं।

(२) जीवन–मन्त्र के प्रत्येक वर्ण को प्रणव (ॐ) से सम्पुटित करके सौ-सौ बार जपना।

(३) ताड़न–मन्त्र को लिखकर उसके प्रत्येक वर्ण को वायु-वीज (यं) द्वारा चन्दन के जल से सौ-सौ बार ताड़न करना।

(४) बोधन–मन्त्र के लिखे हुए प्रत्येक वर्ण पर रक्त करवीर पुष्प से मन्त्र के जितने अक्षर हों, उतनी बार ताड़न करना।

(५) अभिषेक–मन्त्र के प्रत्येक वर्ण को रक्त कनेर के फूल से 'रं'-वीज द्वारा अभिमन्त्रित कर यथा-विधि अभिषेक करना।

(६) विमलीकरण–सुषुम्ना नाड़ी में मनोयोग-पूर्वक मन्त्र का चिन्तन कर, मन्त्र के प्रत्येक वर्ण को अश्वत्थ-पत्र के ऊपर लिखकर 'ज्योति-मन्त्र' द्वारा जल से सींचना। ज्योति-मन्त्र का उद्धार इस प्रकार है–

तारं व्योमाग्निमनु-युक्, दण्डी ज्योतिर्मनुस्मृतः। अर्थात् 'ॐ ह्रीं'।

(७) आप्यायन–'ज्योति-मन्त्र' (ॐ ह्रीं) द्वारा सुवर्ण जल से अथवा कुशोदक से या पुष्पोदक से मन्त्र के वर्णों को सींचना।

(८) तर्पण–'ज्योति-मन्त्र' (ॐ ह्रीं) द्वारा जल से मन्त्र के प्रत्येक वर्ण का तर्पण करना।

मधुना शक्ति-मन्त्रेषु, वैष्णवे चेन्दुमज्जलैः। शैवे घृतेन दुग्धेन, तर्पणं शस्यमीरितम् ।।

अर्थात् 'शक्ति-मन्त्र' का मधु से, 'वैष्णव-मन्त्र' का स्वच्छ जल से और 'शैव-मन्त्र' का घृत और दुग्ध से तर्पण करना चाहिए।

(९) दीपन–तारं (ॐ), माया (ह्रीं) और 'रमा-वीज' (श्रीं) को मन्त्र के पूर्व लगाकर मन्त्र का एक सहस्त्र जप करना।

(१०) गुप्ति–मन्त्र को प्रकट न करके सदा गुप्त रखना और ओठों के बाहर न निकालना तथा 'माया-वीज' (ह्रीं) से सम्पुटित कर एक सहस्त्र जप करना।

'मन्त्र' और 'देवता' की एकता

✦ 'मन्त्र-शास्त्र' में मन्त्रों की असाधारण शक्ति का वर्णन है। यह प्रसिद्ध है कि 'मन्त्राधीनाश्च देवताः'। मन्त्रानुष्ठान से भगवती जगदम्बिका प्रसन्न होती हैं, उनकी प्रसन्नता से सकल देवता वशीभूत हो जाते हैं और अष्ट-सिद्धियाँ स्वयं साधक की सेवा में उपस्थित हो जाती हैं।

✦ 'योग-शास्त्र' में कहा है–

मन्त्र-साधनतो देवा, देव्यः संयान्ति वश्यतां। विभवाश्चैव जगतो, यान्ति तस्योप-भोग्यताम्।।

अर्थात् मन्त्रानुष्ठान से समस्त देवी-देव-गण स्वतः वशीभूत हो जाते हैं और मन्त्र-सिद्धिवाले को 'भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव' के वचनानुसार संसार के सभी ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं।

✦ 'मन्त्र-शास्त्र' में शैव, गाणपत, सौर, वैष्णव और शाक्त आदि जितने भी मन्त्र हैं, सबकी संख्या सात करोड़ है। अतएव 'सर्वेश्वरी सर्व-मयी, सर्व-मन्त्र-स्वरूपिणी' इत्यादि नामों की व्याख्या में श्री भास्करानन्दनाथ लिखते हैं–'सर्वे सप्त-कोटि-संख्यक मन्त्राः स्वरूपमस्याः' अर्थात् सात करोड़ मन्त्र ही जिसका स्वरूप है, ऐसी त्रिपुरा भगवती है। 'गोपाल-सहस्त्र-नाम' में भी लिखा है– 'सप्त-कोटि-महा-मन्त्र-शेखरो देव-शेखरः।'

✦ १. स्थूल, २. सूक्ष्म और ३. पर-भेद से 'देवता' के तीन रूप होते हैं। 'शान्ताकारं भुजग-शयनम्', 'ध्यायेन्नित्यं महेशम्', 'बालार्क-मण्डलाभासां' इत्यादि पद्यों से जो हम विष्णु, शिव और शक्ति का ध्यान करते हैं, वही उनके स्थूल रूप हैं। 'मन्त्र'–देवता का सूक्ष्म-रूप है और वासना-मय पर-रूप है। 'योग-वाशिष्ठ' में लिखा है–

सामान्यं परमं चेति, द्वे रूपे विद्धि मेऽनघ! पाण्यादि-युक्तं सामान्यं, यत्तु मूढा उपासते।।

परं रूपमनाद्यन्तं, यन्नैकमनामयम्। ब्रह्मात्मा परमात्मादि-शब्दैनैतदुदीर्यते।।

सामान्यं द्विविधं प्रोक्तं, स्थूल-सूक्ष्म-विभेदतः।

इत्यादि वाक्यों से स्पष्ट होता है कि कर-चरणादि-विशिष्ट-स्वरूप–देवता का स्थूल शरीर है, 'मन्त्र'–सूक्ष्म शरीर और 'वासना-मय रूप'–पर-शरीर है, जो ब्रह्मात्मा, परमात्मादि शब्दों से व्यवहृत होता है।

✦ 'कौलिक-प्रवर' तन्त्राचार्य श्रीभास्करानन्दनाथ श्रीललिता-सहस्त्र-नाम की 'सौभाग्य-भास्कर' व्याख्या में लिखते हैं– 'ईदृक् प्रकाश-विमर्श-सामरस्यमापन्नाया देव्यास्त्रीणि रूपाणि स्थूलं सूक्ष्मं परं चेति। कर-चरणादि-विशिष्टं 'स्थूलं', मन्त्र-मयं 'सूक्ष्मं', वासना-मयं 'परं' चेति।

✦ '**मन्त्र**' और '**देवता**' के एक होने के कारण से ही '**कुलार्णव-तन्त्र**' में कहा है–

गुरौ मनुष्य बुद्धिश्च, मन्त्रे चाक्षर-वाचिताम्। प्रतिमासु शिला-बुद्धिः, कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ।।

अर्थात् गुरु को मनुष्य समझना, **मन्त्र** को सामान्य अक्षर समझना कि यह क्या है? यह तो पाँच सात अक्षर जोड़ कर एक वाक्य बना दिया है और **देव-प्रतिमा** को शिला समझना–ये तीनों बातें साधक को नरक में ले जानेवाली हैं। अतः स्पष्ट विदित होता है कि '**मन्त्र**'–**देवता का रूप** है, **मन्त्र** और **देवता** में भेद नहीं है।

✦ '**दीक्षा**'-द्वारा गुरु से '**मन्त्र**' प्राप्त होता है। '**गु**' अन्धकार, '**रु**' हटानेवाला–दोनों मिलकर '**गुरु**'-शब्द बना, जिसका अर्थ हुआ '**अविद्या-रूपी अन्धकार का नाश करनेवाला**।' प्रथम '**गु-कार**' का अर्थ '**सन्**' और '**रु-कार**' का अर्थ '**ज्ञान**' है, अतः '**ब्रह्म-ज्ञान**' करानेवाला '**गुरु**' कहलाता है। '**कुलार्णव-तन्त्र**' में कहा है कि '**गुप्त**' **आगम** और उसके **मन्त्र का ज्ञान** करानेवाला '**रुद्र**' (**शिव**)-स्वरूप '**गुरु**' कहलाता है।

✦ '**सुन्दरी-तापिनी**' में '**गुरु**', '**देवता**' और '**मन्त्र**' की एकता के सम्बन्ध में लिखा है–

यथा घटश्च कलशः, कुम्भश्चैकार्थ-वाचकाः।तथा मन्त्रो देवता च, गुरुश्चैकार्थ-वाचकाः।।

अर्थात् जैसे **घट**, **कलश** और **कुम्भ**–ये तीनों पद पर्याय-वाचक हैं और अर्थ तीनों का एक ही है, केवल नाम से भेद है। इसी प्रकार '**मन्त्र**', '**देवता**' और '**गुरु**'–ये तीनों एकार्थ-वाचक पद हैं। नाम में भेद अवश्य है, किन्तु अर्थ में भेद नहीं है।

✦ जिस प्रकार '**मन्त्र**' और '**देवता**' एक हैं क्योंकि '**मन्त्र**'–**देवता का सूक्ष्म रूप** है, उसी प्रकार '**गुरु**' और '**देवता**' भी एक हैं क्योंकि '**गुरु**'-द्वारा ही '**इष्ट-देव**' **का मन्त्र** लोगों को ज्ञात होता है, जिससे '**ब्रह्म-ज्ञान**' प्राप्त होता है। कहा भी है–

श्रीगुरोर्निश्चला भक्तिर्वर्धते हि यथा यथा। तथा तथाऽस्य विज्ञानं, वर्धते कुल-नायिके!।।

अर्थात् जैसे-जैसे गुरु-देव के प्रति भक्ति बढ़ती है, वैसे-वैसे साधक का विज्ञान भी बढ़ता जाता है। अतः '**ब्रह्म-ज्ञान**' की प्राप्ति '**गुरु**' और '**मन्त्र**' दोनों की कृपा के बिना नहीं हो सकती। अतः जिस प्रकार '**मन्त्र**' और '**देवता**' एक ही हैं, उसी प्रकार '**गुरु**' और '**देवता**' भी एक ही हैं। अन्यत्र भी कहा है–

यथा देवस्तथा मन्त्रो, यथा मन्त्रस्तथा गुरुः। देव-मन्त्र-गुरूणां च, पूजायाः सदृशं फलम् ।।

अर्थात् जो **देवता का स्वरूप** है, वही **मन्त्र का स्वरूप** है। जो **मन्त्र का स्वरूप** है, वही **गुरु-देव का स्वरूप** है। अतएव तीनों की उपासना का फल एक ही है।

✦ '**मन्त्र**' और '**देवता**' तथा '**गुरु**' और '**देवता**' तत्त्वतः एक ही हैं, केवल नाम मात्र में भेद है। इसीलिए '**गुरु-वन्दन-स्तोत्र**' में '**सकल-देवता-रूपिणं**' विशेषण आया है, जिससे यही निश्चित होता है कि '**गुरु**' और '**देवता**' एक ही हैं।

✦ '**गुरु-चरणों**' का ध्यान–'**ब्रह्म-रन्ध्र**' में किया जाता है और '**मूल-विद्या**' का ध्यान भी '**मूलाधार**' से लेकर '**ब्रह्म-रन्ध्र**' तक किया जाता है। पुनः '**ब्रह्म-रन्ध्र**' में **गुरु और देवता की एकता का** विभावन किया जाता है। यही **मन्त्र-शास्त्र का रहस्य** है।

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र-शास्त्र
और
मनो-विज्ञान

पं० गोविन्द शास्त्री जी
दुगवेकर

मन्त्र-सिद्धि

पं० कन्हैयालाल जी
दीक्षित

ॐ

मन्त्र
या
देवता-रहस्य

पं० गोपीनाथ जी कविराज

मन्त्र-शास्त्र
और
योग

पं० श्याम शर्मा जी वाशिष्ठ

मन्त्र-शास्त्र और मनो-विज्ञान

- **श्री जगदम्बा** के **सहस्त्र-नामों** में से **१. अन्तर्मुख-समाराध्या, २. बहिर्मुख-सुदुर्लभा**—इन दो नामों में '**मन्त्र-शास्त्र**' का सारा रहस्य भरा हुआ है। **अध्यात्म-शास्त्र** का सिद्धान्त है कि '**मन**' ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है। बाह्य विषयों में जब तक '**मन**' फँसा रहता है, तब तक मनुष्य बद्ध है—'**मन**' के आत्माभिमुख होते ही वह मुक्त हो जाता है। '**आत्म-प्रवण**' **मन—अन्तर्मुख** है और '**बहिर्विषयैक-प्रवणता**' उसे **बहिर्मुख** किए बिना हो नहीं सकती।
- **श्री जगदम्बा** की व्यापकता असीम है और **अन्तर्मुख मन की शक्तियाँ** भी असीम हैं। निःसीम का अनुभव निःसीम ही कर सकता है। **बहिर्मुख मन** की गति सीमित है। वह निःसीम वस्तु का आकलन करने में सर्वथा असमर्थ है। '**मन्त्र-शास्त्र**' वास्तव में **बहिर्मुख मन को अन्तर्मुख बनाने का शास्त्र** है।
- मनो-विज्ञान के **पाश्चात्य विद्वान्** दो '**मन**' मानते हैं—**१. गूढ़ मन** और **२. बाह्य मन**। **पौर्वात्य विद्वानों** ने भी '**मन**' और '**चित्त**' के रूप में दो '**मन**' माने हैं। '**मन**'—सङ्कल्प करता है और '**चित्त**'—चिन्तन करता है। वास्तव में '**मन**' और '**चित्त**' पर्याय-वाची शब्द हैं। जब **मन**—बाह्य विषयों में व्यस्त रहता है, तब **कोरे सङ्कल्प-विकल्प** किया करता है और जब आत्माभिमुख होता है, तब **चिन्तन** करने लगता है। '**मन्त्र-शास्त्र**' की दृष्टि से दो '**मन**' मानने की आवश्यकता नहीं है। एक ही **मन** की दो अवस्थाएँ—**१. अन्तर्मुखी** और **२. बहिर्मुखी** मानने से काम बन जाता है।
- '**मन**' की अनन्त शक्तियाँ हैं, जो प्रसुप्त अवस्था में रहा करती हैं। **साधना** के द्वारा जब '**मन**' को **अन्तर्मुखी** किया जाता है, तब उसकी **शक्तियाँ** जाग उठती हैं और साधक उनकी सहायता से नाना प्रकार के ऐहिक और पारलौकिक सुखों—सिद्धियों—को प्राप्त कर अन्त में **श्रीजगदम्बा** के स्वरूप में विलीन हो जाता है।
- '**मन्त्र-शास्त्र**'—**भुक्ति** और **मुक्ति** अथवा **भोग** और **मोक्ष**—दोनों का साधन-शास्त्र है। इसी कारण कहा जाता है कि उसमें **मन को अन्तर्मुख करने की विधि** बताई गई है।
- गूढ़ अर्थात् '**अन्तर्मुख मन**' की अगाध शक्तियों को **पाश्चात्य मनोविज्ञानी** भी मानते हैं। **अमेरिका** के **डा.हडसन**, जो **आधुनिक मनोविज्ञान-शास्त्र** के विशेषज्ञ हैं, लिखते हैं—"**बाह्य मन—पञ्च ज्ञानेन्द्रियों के अधीन** होकर ज्ञान-लाभ करता है, परन्तु **अन्तर्मन या गूढ़ मन**—ज्ञानेन्द्रियों की सहायता के बिना ही **बाह्य मन** की अपेक्षा बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त कर लेता है।"
- **पुनर्जन्म** के सिद्धान्तानुसार '**गूढ़ मन**' में '**सञ्चित ज्ञान**' विद्यमान रहता है और **गूढ़** या **प्रसुप्त मन**—'**सहज ज्ञान**' (इंस्टिक्ट) या '**अन्तः-स्फूर्त-ज्ञान**' (इण्ट्यूशन, इंस्पिरेशन) का आधार होता है। **बाह्य मन** को शून्यावस्था में ले जाकर, **समाधि** लगाकर या निद्रित कर **प्रसुप्त गूढ़ मन** को जागृत करने से उसकी प्रचण्ड शक्तियों का अनुभव होने लगता है।
- **सर विलियम हैमिल्टन** लिखते हैं—"**अन्तर्मानस के कपाट खुलते ही समस्त ज्ञान के भण्डार के द्वार भी खुल जाते हैं।**"

- गोस्वामी जी ने भी यही कहा है–

  उघरहिं विमल विलोचन ही के। मिटहिं दोष-दुख भव-रजनी के।।
  सूझहिं राम-चरित-मणि-माणिक। गुप्त-प्रकट जे-जे जेहि खानिक।।

- **डा० हडसन** का मत है कि "**अन्तर्मुख गूढ़ मन–अन्त:-स्फूर्ति** और **सुषुप्ति** के कार्यों का अधिष्ठान है। वह **देहातीत** रह सकता है और सहस्त्रों कोसों की दौड़ लगा कर वहाँ की बातें जान सकता है। उसमें **परिचित ज्ञान (टेलीपैथी), अतीत-अनागत ज्ञान** और **अपरोक्ष ज्ञान** होता है। वह सोता नहीं। उसका सभी शारीरिक शक्तियों पर अधिकार होता है। **हृदय की क्रिया, श्वसन-क्रिया, पाचन-क्रिया, रोग-क्रिया** आदि शारीरिक क्रियाओं को वह रोक सकता है और तीव्र भी कर सकता है। ज्ञानेन्द्रियों की सब शक्तियाँ उसके अधीन होती हैं। **स्थूल शरीर** तो उसका एक काम-चलाऊ साधन-वाहन है। उसे उसकी विशेष आवश्यकता नहीं होती।"

- **'गूढ़ मन'** का एक दोष भी है। वह यदि न होता, तो **'मन'–'आत्मा'** ही कहलाता। **'गूढ़ मन'** का वह दोष है–**परावलम्बित्व**। वह नि:सीम श्रद्धालु और भोला होता है। उसे **मोहिनी-विद्या, मन्त्र-विद्या** या **योग-क्रिया** से जागृत करना पड़ता है। उसके जाग जाने पर उससे जो चाहें –काम करा सकते हैं। वह श्रद्धा-पूर्वक आपकी इच्छा के अनुसार आचार, विचार और उच्चार करने लगता है। यदि **मोहिनी-विद्या-विशारद** या **मन्त्र-शास्त्री** धूर्त हो, तो असम्भव बातों पर भी उसका विश्वास जमा देता है और तदनुसार उससे आचरण भी कराता है। अन्तत: **अन्तर्मानस** को इस दोष से बचाने के लिए **ढोंगियों, पाखण्डियों** आदि से सदा सावधान रहना चाहिए।

- **मान्त्रिक** यदि **स्वार्थी, वञ्चक** या **दुराचारी** हो, तो **अन्तर्मानस** के द्वारा वह नाना प्रकार के अनर्थ खड़े कर देता है। उसे **अत्यन्त शील-सम्पन्न** और **सच्चरित्र** होना चाहिए। इसीलिए **मन्त्र-शास्त्र–'चित्त-शुद्धि'** को अग्र स्थान देता है। **'मन्त्र-शास्त्र'**–सदाचारियों के लिए है। **सदाचारी मन्त्र-वेत्ता**–अपना उत्कर्ष करता हुआ, जगत् का भी कल्याण कर सकता है।

- हिन्दू-**धर्म** के अन्तर्गत जन्म से लेकर मरण-पर्यन्त **मन्त्रों** के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। हिन्दुओं का कोई संस्कार अमन्त्रक नहीं होता। हमारे पूर्वज **मन्त्रों** के सामर्थ्य को अच्छी तरह जानते थे, परन्तु पराधीनता, प्रमाद और आलस्य के कारण हमारी **संशोधन, खोज** या **अनुसन्धान की प्रवृत्ति** ही नष्ट हो गई और हम अपने **प्राचीन 'मन्त्र-शास्त्र'** के प्रति केवल उदासीन ही नहीं, अपितु उसके नाम से हिचकने भी लगे हैं।

- हिन्दू **धर्म-शास्त्रों** के अनुसार **मनन** से ही **'मन्त्र की सिद्धि'** होती है। **'योग-शास्त्र'** में भी कहा है–**'तज्जपस्तदर्थ-भावनम्'**। **'मन्त्र-शास्त्र'** के प्रत्येक बीज में **एक विशेष अर्थ–विशेष रहस्य**–भरा हुआ है। इसी से वह **'मन्त्र'** कहलाता है। उस **अर्थ** या **रहस्य** की **भावना** करते हुए जब **'मन्त्र का जप'** किया जाता है, तब साधक का **'मन'–उपास्य में एकाग्र** हो जाता है और **'मन'** के **एकाग्र** होने पर उसे **'अन्तर्मुख'** करना सहज हो जाता है। **'चित्त की एकाग्रता'** ही **'मन्त्र-शास्त्र'** का प्राण है।

'मन्त्र' की सिद्धि हेतु कुछ विशेष बातें

- '**मन्त्र**' के **उच्चारण** के समय जैसे. दो मित्रों के हृदय आलिङ्गित होने पर उनके हृदय की ऊर्मियाँ अनुरागवती होती हैं, वैसी ही उत्कण्ठा को हृदय में जप-कर्त्ता को बढ़ाते रहना चाहिए।
- '**मन्त्र**' का जप करते समय **आधार-चक्र** में, गुप्त स्थान के मध्य से **तेज का प्रकाश** बाहर फेंकते हुए-'**इष्ट-वीज**' को ऊपर उठता हुआ देखना चाहिए।
- '**मन्त्र**' का '**जप**' क्रमशः धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। '**माला**' फेरने में शीघ्रता नहीं करनी चाहिए। **अनुराग-सहित** '**मन्त्र-जप**' करना चाहिए। **पुरश्चरण** के नियमित काल तक **देवता का गुण-ध्यान** करना, **स्वल्पाहार** करना, **स्वल्प-निद्रा** करना और प्रथम दिन से उत्तरोत्तर हृदयान्तर्गत **देव-अन्वेषण** में मुग्ध रहना चाहिए।
- '**मन्त्र-आराधन-काल**'-में **मन के सङ्कल्प-विकल्पों पर विशेष विचार** करना चाहिए।
- '**मन्त्र**' के '**जप-काल**' में-**शङ्खादि सुरीले वाद्यों** का बजना, **उत्तम सौभाग्यवतियों** से या **पूज्य वृद्धों** से या **राज्य-वर्ग** से आशीर्वाद की प्राप्ति होना, **सुन्दर स्वप्नों का दर्शन** होना शुभ-सूचक होता है। इन शकुनों से '**मन्त्र-सिद्धि**' शीघ्र होगी, ऐसा ज्ञात होता है।
- यदि **मन के सङ्कल्प, स्वप्न एवं शकुन**-शुभ दिखाई न दें, **घर में झगड़ा** होवे, तो '**मन्त्र**' को पुनः '**संस्कार**' से संस्कृत करना चाहिए। यदि इससे भी **शुभ चिह्न** दिखाई न दें, तो '**मातृका**' से संस्कृत क्वाथोदक (गुनगुने जल) से '**अभिषेक**' करना चाहिए। यदि इससे भी **शुभ चिह्न** दिखाई न दें, तो '**मन्त्र**' को '**असाध्य मन्त्र**' समझकर उसका त्याग करना चाहिए।
- '**मन्त्र**' की सिद्धि की अवस्था से कुछ पूर्व साधकों को '**भय**' भी होता है। '**भय**' होना '**मन्त्र-सिद्धि**' का लक्षण भी माना जाता है। '**भय**' बिना सिद्धि नहीं होती। प्रायः '**सर्प**' का भय होता है-दूर से एकदम भागा हुआ अपनी ओर आता हुआ दिखाई देता है। हालत ऐसी हो जाती है कि पत्ता खड़का, बन्दा भड़का! बात-बात में रोमाञ्च होने लगता है।
- '**सर्प**' का उदाहरण उत्तम कक्षा की '**मन्त्र-सिद्धि**' को देनेवाला, विशेषकर '**आत्म-ज्योति**' का प्रकाशक होता है, यह '**कुण्डलिनी**' के अभ्युत्थान के समय में ही होता है और गले या छाती तक आकर गायब हो जाता है। गायब होने के बाद **स्वप्न में उत्तम शब्दों का श्रवण, आशीर्वाद** आदि की प्राप्ति होती है। तीन दिन तक इन बातों को किसी से भी न कहना चाहिए। यह समय '**मूलाधार**' के बन्धन के खुलने का है। यह '**शक्ति-पात**' का आरम्भ-काल और '**क्षरित सिद्धि**' का उत्पादक समय होता है। यदि साधक आगे साधना करता रहता है, तो उपर्युक्त '**मन्त्र-सिद्धि**' स्थायी हो जाती है। अन्यथा वर्ष-दो-वर्ष के बाद गायब हो जाती है। ऐसी '**मन्त्र-सिद्धि**' साधक को '**मन्त्र**'-प्राप्ति के छः महीने के भीतर हो ही जानी चाहिए। इसके बाद साधक को कुछ समय के अन्तराल पर '**मन्त्र-पुरश्चरण**' में लग जाना चाहिए, जिससे '**मन्त्र-सिद्धि**' स्थायी हो जाए।

✦ '**मन्त्र**' का शाब्दिक अर्थ है–'**मनन करनेवाले की रक्षा करना**'। व्याकरणानुसार '**मन्त्र**'-शब्द की व्याख्या है–'**मन्त्र्यते गुप्तं भाष्यते स मन्त्रः**।''**मन्त्रि गुप्त-भाषणे**'–इस धातु में '**घत्र**' प्रत्यय करने से '**मन्त्र**'-शब्द बनता है। अतः '**मन्त्र**' को **गुप्त** रक्खा जाता है और **गुप्त** ही जपा जाता है।

✦ '**मन्त्र**' में '**मनन**' करनेवाले की **रक्षा का सामर्थ्य** कब होता है? इसका उत्तर यह है कि मनुष्य में जैसे स्वतः **सर्व-कर्म-क्षमता** नहीं आती, अपितु उसके **जात-कर्मादि संस्कारों** से ही उसमें क्षमता बढ़ती है, वैसे ही '**मन्त्रों**' में भी '**दश संस्कार**' करने से ही **क्षमता (सामर्थ्य)** बढ़ती है। '**संस्कार-युक्त**' होने पर '**मन्त्र**'–'**पुरश्चर्या**' से और भी कार्य-क्षम हो जाता है। '**मन्त्र**' में **चैतन्य** डालने का विधान कई '**तन्त्र**'-ग्रन्थों में बताया गया है। बिना **चैतन्य** के '**मन्त्र**' काम का नहीं होता, ऐसा '**महा-निर्वाण-तन्त्र**' में कहा है।

✦ '**महा-निर्वाण-तन्त्र**' में महा-देव जी पार्वती से कहते हैं–''**हे परमेशानि! मन्त्र की अधिष्ठात्री देवता का ज्ञान कर लेना और उसे तदर्थ भावना के साथ, तादूप्य-भावना से भावित कर लेना, भक्तों को 'सिद्धि'-दायक होता है। यही 'मन्त्र' में चैतन्य डालना है, इसी क्रिया से 'मन्त्र'-चैतन्य हो जाता है।**''

✦ कुछ '**तन्त्र**'-ग्रन्थों का कथन है कि जब तक '**कुण्डलिनी**' जागृत नहीं होती, तब तक '**मन्त्र**'–पूजनादि सफल नहीं होते। यह कथन वास्तव में '**कुण्डलिनी-जागरण**' के माहात्म्य को बताते हैं। इसका यह अर्थ न समझना चाहिए कि जब तक '**कुण्डलिनी-जागरण**' न हो, तब तक कोई '**मन्त्र-सिद्धि**' होती ही नहीं। वस्तुतः केवल '**मन्त्र-जप**' से भी '**कुण्डलिनी-जागरण**' होता है। '**भूत-शुद्धि**' के विधान में स्पष्ट निर्देश है कि–'**हुमिति वीजेन कुण्डलिनीमुत्थाय जीवं ब्रह्मणि संयोज्य**।' अर्थात् '**हुं**'-वीज-मन्त्र से **कुण्डलिनी** का उत्थापन करे। '**कुण्डलिनी-जागरण**' के कई प्रकार हैं, उनमें '**मन्त्र-योग**' मुख्य है।

मनन करने योग्य बातें

जिस मन्त्र का जो अधिष्ठातृ-देवता होता है, उसका स्वरूप उससे प्रकट होता है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र केवल व्यक्ति-गत मनन नहीं है, अपितु वह चेतना का एक विशेष शब्द-शरीर है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' वर्णों का केवल समूह मात्र नहीं है। वह तेज या शक्ति का पुञ्ज-स्वरूप ही है।

❀ ❀ ❀

कहावतें–संसार के मनुष्यों को सूचना और परामर्श प्रदान करती हैं, जब कि 'मन्त्र'–मानव से परे शक्ति को जाग्रत करते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्रों' का दार्शनिक रहस्य

✦ '**मन्त्र**' का स्वरूप क्या है? मनुष्य की **आध्यात्मिक उन्नति** में उसका क्या स्थान है? '**मन्त्र-साधना**' का **वास्तविक अभिप्राय** क्या है?–ये सारे प्रश्न साधारणतः तत्त्व-जिज्ञासु साधक के हृदय में उठा करते हैं। इनके साथ दूसरे आनुषङ्गिक प्रश्न नहीं उठते, ऐसी बात नहीं है। इस विषय का यथार्थ समाधान जानने के लिए '**मन्त्रों के रहस्य**' से अवगत होना आवश्यक है।

✦ सृष्टि के आदि में **परमेश्वर**–अपनी बहिरङ्गी शक्ति '**महा-माया**' के प्रति या '**विन्दु**' के ऊपर दृष्टि डालते हैं। यह दृष्टि-क्षेप ही **चैतन्य-शक्ति का सञ्चार** कहलाता है। दृष्टि-पात के पूर्व-क्षण तक '**महा-माया**'–**सुप्त अवस्था** में विद्यमान रहती है। **विशुद्ध जड़-शक्ति** का नाम ही '**महा-माया**' है। वे सारे **अणु-रूपी जीव**, जो पूर्व-कल्प की साधना, वैराग्य, संन्यास, विवेक, ज्ञान आदि के फल-स्वरूप **अशुद्ध जड़-शक्ति**-रूपी '**माया**' का अतिक्रमण करने में तो समर्थ हो चुके हैं, परन्तु **परमेश्वर के निज स्वरूप** में उपनीत नहीं हो पाए हैं, वे '**महा-माया**' के गर्भ में विद्यमान रहते हैं। यहाँ सारे जीवों की अवस्था **सुषुप्ति**-वत् होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं। '**माया**' से मुक्त होने के फल-स्वरूप इन जीवों के **अशुद्ध मायिक देह** अर्थात **स्थूल, सूक्ष्म** और **कारण देहें** जिस प्रकार नहीं रहतीं, उसी प्रकार कोई **उच्च-तर विशुद्ध देह** भी नहीं रहती। वे '**माया**' के परे '**महा-माया**' के गर्भ में लीन रहते हैं।

✦ '**माया**' के गर्भ में रहना जिस प्रकार का होता है, बहुत कुछ उसी प्रकार का '**महा-माया**' के गर्भ में रहना भी होता है। दोनों दशाओं के बीच में केवल आवरण-गत पार्थक्य होता है। **अप्राकृत दिव्य अवस्था** या **भागवत अवस्था** अत्यन्त दुर्लभ है। **चैतन्यता के विकास** के बिना उसका आविर्भाव नहीं होता। वही '**पशुत्व**' के परे की अवस्था है। '**माया**' की निद्रा और '**महा-माया**' की निद्रा–दोनों ही दशाओं में '**पशु-भाव**' विद्यमान रहता है। जब तक '**पशुत्व**' है, तब तक **वास्तविक जागृति** कहाँ?

✦ '**महा-माया**' की विश्रान्ति के समय उनके गर्भ-स्थित **जीव–सुषुप्त** होते हैं। उनका **जीवत्व**–'**पशुत्व**'-मूलक होता है। जब तक **चैतन्य का उन्मेष** नहीं होता, तब तक '**पशुत्व**' तिरोहित नहीं होता। उन **विदेह-कैवल्य-प्राप्त** जीवों की **भगवत्ता-प्राप्ति** के मार्ग में दो बाधाएँ होती हैं–१. **आत्मा का स्वरूप-गत अणुत्व** या '**पशुत्व**', जो **अभिन्न-ज्ञान-क्रियात्मक चैतन्य** के स्वरूप का आच्छादन है और २. '**महा-माया**' **का सम्बन्ध**। इन दोनों बाधाओं के निवृत्त होने पर **शुद्ध भगवत्ता की अभिव्यक्ति का मार्ग** खुल जाता है।

✦ जब सृष्टि के आदि में '**महा-माया**' में **चैतन्य-शक्ति का आधान** होता है, तब इस शक्ति की क्रिया के कारण '**महा-माया**' क्षुब्ध होकर कार्योन्मुख होती हैं और उनमें **सुप्त-वत् निहित अणु-रूपी सारे जीव** भी जाग उठते हैं। निद्रा-काल में ये सारे जीव **विदेह-अवस्था** में '**महा-माया**' में लीन रहते हैं, परन्तु '**महा-माया**' के क्षुब्ध होते ही इनकी निद्रा भङ्ग हो जाती है।

✦ **देह-सम्बन्ध** के बिना कोई जीवाणु कभी जाग नहीं सकता। अतएव **चैतन्य-शक्ति की क्रिया** के फल-स्वरूप क्षुब्ध '**महा-माया**' से समस्त **जीवाणुओं** के प्रयोजन के अनुरूप **देह आदि की उत्पत्ति** होती

है और उनका विकास भी हो जाता है। इसलिए जब वे जाग उठते हैं, तब उनमें कोई भी **विदेह** नहीं रहता। वे '**महा-माया**' से उत्पन्न शरीर लेकर ही प्रकट होते हैं।

- '**महा-माया**' में **चैतन्य-शक्ति का आवेश** तथा समस्त **जीवाणुओं में चैतन्य-शक्ति का सञ्चार** एक ही बात है क्योंकि सारे **जीवाणु-सुप्त अवस्था** में '**महा-माया**' के साथ अभिन्न होकर ही रहते हैं।
- '**महा-माया**' के गर्भ में असंख्य **जीवाणु** विद्यमान रहते हैं। **महा-प्रलय** की दशा में ये सभी **सम-भाव** से लीन रहते हैं, किन्तु **चैतन्य-शक्ति के सम्पात** के समय ये सभी समान रूप से **प्रबुद्ध** नहीं होते और न हो ही सकते हैं। किसी-किसी अणु की ही **जागृति** होती है, सबकी नहीं। यद्यपि सभी **जीवाणु-मल-विशिष्ट** होते हैं और **चैतन्यता या भगवदनुग्रह की आवश्यकता** सबको सम-भाव से होती है, तथापि **मल की परिपक्वता** सबकी समान नहीं होती। जिसका **मल** जितना अधिक परिपक्व होता है, वह उतने ही अधिक मात्रा में **चैतन्य-शक्ति** की ओर उन्मुख होता है।
- '**मल**' ने अनादि-काल से **आत्मा** के साथ युक्त होकर **आत्मा** को '**जीवाणु**'-रूप में परिणत कर रक्खा है। '**अणुत्व**' ही '**पशुत्व**' है। यह **आत्मा का स्वभाव-सिद्ध धर्म** नहीं है। **आत्मा का स्वाभाविक धर्म** तो '**शिवत्व**' या **पूर्ण चैतन्य** है। यह **ज्ञान-शक्ति** और **क्रिया-शक्ति** का अभिन्न और अपरिच्छिन्न स्वरूप है।
- '**मल**'-**अनादि** होने पर भी **आगन्तुक** है। इसके द्वारा जब **चैतन्य-स्वरूप** आच्छन्न होता है, तब शिव-रूपी **आत्मा**-'**जीव**' या **पशु**-रूप में परिणत हो जाता है।
- '**मल**'-**काल-शक्ति** के द्वारा निरन्तर परिपक्व होता रहता है। सृष्टि-काल में परिपाक के अन्य उपाय न हों, ऐसी बात नहीं है, परन्तु प्रलय-काल में वे उपाय काम नहीं करते। परिपक्वता की एक ऐसी मात्रा है, जिसके प्राप्त होने पर ये सारे **जीवाणु** अपने-आप **चैतन्य-शक्ति** की ओर उन्मुख हो जाते हैं।
- आकाशस्थ सूर्य की किरणें समुद्र के ऊपर और कुछ तल-प्रदेश तक पड़ती हैं, परन्तु जो '**जीव**' इन किरणों की सीमा-रेखा के अन्तर्गत उपस्थित नहीं हो सकते, वे आपातत: इन किरणों की क्रिया से मुक्त रहते हैं। दूसरे पक्ष में जिन्हें इन किरणों का स्पर्श प्राप्त हो जाता है, वे इनके प्रभाव से जाग उठते हैं और अपने **मल-परिपाक** की मात्रा के अनुसार **विशुद्ध देह** पाकर **शुद्ध जगत्** में सञ्चरण करते हैं। अतएव अपेक्षाकृत **अपरिपक्व मल** से **जीवों की सुषुप्ति** दूर नहीं होती। साधारणत: कल्पान्तर में उसके दूर होने की सम्भावना रहती है।
- **स्वातन्त्र्य-शक्ति** की दृष्टि से विचार करने पर **मल की परिपक्वता** के ऊपर ही **चैतन्य-शक्ति का सञ्चार** निर्भर करता है। जिन जीवों के विषय में **आलोक-स्पर्श** होने की बात कही गई है, वे सभी पुरातन जीव हैं। वे संसार में पतित हुए थे तथा प्रत्यावर्तन की दिशा में '**माया**'-पर्यन्त तत्त्व-भेद करके देह से विमुक्त होकर '**महा-माया**' के भीतर **केवली-रूप** में विलीन होकर रहते हैं। '**माया**'-राज्य का भेदन हो जाने पर भी इनकी **वासना-मुक्ति** पूर्ण रूप से नहीं होती, क्योंकि '**मायातीत वासना**' उस समय भी उनमें रहती है।

- '**मायिक वासना**' को क्षीण करने के लिए जिस प्रकार '**मायिक देह**' ग्रहण करके '**मायिक जगत्**' में कर्म करना पड़ता है, देह ग्रहण किए बिना वासना का क्षय नहीं होता, '**मायातीत वासना**' को क्षीण करने के लिए भी उसी प्रकार देह ग्रहण करके तादृश कर्म-सम्पादन करना आवश्यक होता है।
- '**मायिक वासना**'–मलिन होती है, परन्तु '**मायातीत वासना**'–विशुद्ध होती है।
- कर्तृत्व-अभिमान के वश '**मायिक जगत्**' में कर्म होता है और **भोक्तृत्व-अभिमान** के वश '**मायिक जगत्**' में भोग होता है।
- **कर्मानुष्ठान** और **कर्म-फल-भोग** को ही मिलित रूप में **संसार** कहते हैं, परन्तु '**मायातीत वासना**' के स्थल में न तो **कर्म** के मूल में **अहङ्कार** रहता है, न **भोग** के मूल में। इसीलिए उसे **प्रकृत संसार** नहीं कहा जा सकता। यदि उसे संसार कहना हो, तो '**शुद्ध संसार**' कह सकते हैं।
- '**मायातीत कर्म**' ही यथार्थ अधिकार है और '**मायातीत भोग**' ही यथार्थ भोग या सम्भोग है। अधिकार और भोग की अतीतावस्था ही '**लय**' है। यहाँ प्रश्न होता है कि '**मायातीत वासना**' विदेह-जीवाणु में किस प्रकार चरितार्थ हो सकती है? इसका उत्तर यह है कि–'**मायातीत वासना**'–'**मायातीत देह**' के द्वारा ही तृप्ति-लाभ करती है। '**मायिक वासना**' की तृप्ति तो '**मायिक उपादान**' से होती है, परन्तु '**मायातीत वासना**' की तृप्ति '**मायिक उपादान**' से कैसे हो? इसके लिए जो '**मायातीत उपादान**' आवश्यक होता है, उसका ही नाम है '**महा-माया**'।
- जब **शब्द**-रूपी **मन्त्रों** द्वारा **चैतन्य-शक्ति**–'**महा-माया**' को स्पर्श करती है, तब पूर्वोक्त परिपक्व मल से सारे जीव जाग उठते हैं और क्षुब्ध '**महा-माया**' से रचित देहों में अधिष्ठान करके अपने-अपने कार्य-साधन में प्रवृत्त हो जाते हैं।
- **महा-माया** का ही दूसरा नाम है–'**कुण्डलिनी**'-शक्ति। पूर्वोक्त परिपक्व-मलवाले जीवों के देहादि–**कुण्डलिनी**-शक्ति द्वारा रचित होते हैं। तब ये जीव–'**जीव**' नहीं कहलाते । जीव होकर भी वे **ईश्वरीय शक्ति** से सम्पन्न होते हैं।
- '**मन्त्रों**' के द्वारा **परमेश्वर** की करुणा-दृष्टि-रूपी **चैतन्य-शक्ति** के सञ्चार की बात पहले कही जा चुकी है। यह वस्तुतः '**चित्-शक्ति**' का ही उन्मेष है, जो **क्रिया-शक्ति** के रूप में होता है।
- '**चित्-शक्ति**' की दो अवस्थाएँ हैं–१. **सक्रिय** और २. **निष्क्रिय**। वस्तुतः इन दो अवस्थाओं के न होने पर भी कर्म-गत भेद की उपपत्ति के लिए कृत्रिम-भाव से दो कही गई हैं। **निष्क्रिय अवस्था** में क्रिया के अभाव के कारण **शक्ति का सञ्चार** नहीं होता। अतएव यह **शक्ति-सञ्चार** वस्तुतः '**चित्-शक्ति**'-मयी **क्रिया-शक्ति का व्यापार** है। इसी का नामान्तर है–'**दीक्षा**' या '**मन्त्रोपदेश**' ।
- **परमेश्वर** स्वयं ही '**क्रिया-शक्ति**' के प्रवर्तक-रूप में **चैतन्य-दाता गुरु** हैं। पूर्वोक्त **परिपक्व मलवाले जीवाणु**–सृष्टि के आदि में इस **दीक्षा** को प्राप्त कर '**महा-माया**' से उद्भूत **विशुद्ध** देह लाभ कर **परमेश्वर के आदि-शिष्य-रूप** में **शुद्ध जगत्** या '**महा-मायिक जगत्**' में स्थिति-लाभ करते हैं।

✦ हम जिस '**मायिक जगत्**' से परिचित हैं, उसकी सृष्टि-स्थिति आदि समस्त व्यापारों का चरम भार इन्हीं **आदि-शिष्यों** के ऊपर होता है। ये जीव होते हुए भी **ईश्वर-कल्प** हैं, परन्तु **नित्य-सिद्ध परमेश्वर** से ये न्यून है क्योंकि इनमें '**शुद्ध वासना**' है और **परमेश्वर** में '**वासना**' नहीं है। **समष्टि-रूप** से समस्त जगत् की '**कल्याण-कामना**' ही इनकी '**शुद्ध वासना**' का स्वरूप है। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि '**विशुद्ध-वासना**' से परे जाने पर **विशुद्ध भगवद्-भाव** की प्राप्ति हो सकती है, परन्तु वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। वह **विशुद्ध कैवल्य-अवस्था** है, **भगवदवस्था** नहीं ।

✦ सृष्टि के आदि में **परमेश्वर** की **चैतन्य-मयी शक्ति** को प्राप्त होकर जो जीव **विशुद्ध देह** लाभ करते हैं, वे सब **सम-भावापन्न** नहीं होते। उनके बीच भी **अवान्तर-भेद** होता है। अवश्य ही एक प्रकार से सबको एक स्तर के जीव कहा जा सकता है क्योंकि उन सबके भीतर **चित्-शक्ति का उन्मेष** रहता है। सभी **शुद्ध-विद्या** प्राप्त कर **शुद्ध राज्य के अधिवासी** होते हैं तथा न्यूनाधिक रूप में होने पर भी सभी के भीतर **क्रिया-शक्ति** जाग्रत होती है, यही नहीं **क्रिया-शक्ति** के विकास में तार-तम्य होने के कारण उसमें भी तार-तम्य दीख पड़ता है।

✦ **शुद्ध जगत्** के **चेतन-वर्ग** में जो वैषम्य दीख पड़ता है, उसका मूल हेतु-**क्रिया-शक्ति की अभि-व्यक्ति का तार-तम्य** होता है। यह क्यों होता है? इसकी खोज करने पर जाना जा सकता है कि सारे जीवाणुओं में मल समान रूप से परिपक्व नहीं होता। अतएव **भगवत्-शक्ति** अर्थात् **परमेश्वर की क्रिया-शक्ति** को सभी समान रूप से धारण नहीं कर पाते। **मल** के उस परिमाण तक पक्व हुए बिना वह **चित्-शक्ति का स्पर्श** सहन नहीं कर पाता।

✦ **शुद्ध राज्य** में परिपक्वता सभी को प्राप्त होती है, यह सत्य है, परन्तु इस परिपक्वता में भी एक तार-तम्यता होती है और उसी के अनुसार, जहाँ परिपक्वता अधिक होती है, वहाँ **क्रिया-शक्ति का आवेश** अधिक मात्रा में होता है। **मल के भली-भाँति परिपक्व** न होने पर **परमेश्वर की क्रिया-शक्ति** को पूरी तरह धारण नहीं किया जा सकता। **अपक्व मल** की अवस्था में **परमेश्वर की क्रिया-शक्ति का सञ्चार** बिल्कुल ही नहीं होता। अतएव **मल-पाक** न होने पर **श्रीगुरु** भी जीव पर **अनुग्रह** नहीं करते।

✦ समस्त **पक्व मलवाले जीवाणुओं** में, जिनका मल **सर्वापेक्षा अधिक परिपक्व** होता है, **परमेश्वर की क्रिया-शक्ति का आवेश** होने पर उनमें **कर्तृ-भाव** का उदय होता है। यह कर्तृत्व शुद्ध होता है। इसमें **अहङ्कार** का सम्बन्ध नहीं होता। इनके नीचे बहु-संख्यक **पक्व मलवाले जीवाणु** उपर्युक्त प्रणाली से **भगवत्-शक्ति** को प्राप्त होते हैं और **चैतन्य** लाभ करते हैं। इनमें **परमेश्वर की क्रिया-शक्ति** की अभिव्यक्ति अपेक्षा-कृत न्यून होती है, अतएव इनमें **कर्तृ-भाव का उन्मेष** न होकर **करण-भाव का उन्मेष** होता है।

✦ जिन जीवाणुओं में **कर्तृ-भाव का उन्मेष** होता है, वे एक प्रकार से सजातीय होते हैं, तथापि उनमें भी परस्पर न्यूनाधिक्य रहता है। इसी प्रकार **करण-शक्ति-मय समष्टि** में भी परस्पर न्यूनाधिक्य रहता है। जो **कर्तृ-भावापन्न** हैं, वे **ईश्वर-तत्त्व का आश्रय** लेकर रहते हैं तथा जो **करण-भावापन्न** हैं, उनका अवलम्बन **शुद्ध विद्या-तत्त्व** होता है।

- **शुद्ध-विद्या**–मायातीता **ज्ञान-स्वरूपा** है। जो जीव–**ईश्वर-तत्त्व** में अवस्थान करते हैं, वे **ईश्वर** अथवा '**गुरु**' हैं और जो **विद्या-तत्त्व** के आश्रय में रहते हैं, वे '**मन्त्र**' अथवा '**देवता**' हैं। समस्त **मन्त्र–ईश्वर** या '**गुरु**' के अधीन हैं। ये '**गुरु**' के द्वारा प्रयुक्त होकर '**मायिक जीवों**' के उद्धार का कार्य करते रहते हैं। ये स्वतः प्रेरित होकर **जीवोद्धार** में लगे नहीं रह सकते क्योंकि ये '**करण**' हैं–'**कर्त्ता**' नहीं।
- '**गुरु**' और '**देवता**'–दोनों ही **शुद्ध-देह-सम्पन्न** होते हैं। **परमेश्वर के अनुग्रह** की प्राप्ति से दोनों में **निज स्वरूप-ज्ञान** जागा होता है। '**शिवत्व**'-**बोध-रूपी ज्ञान** का उदय दोनों '**गुरु**' तथा '**देवता**' में सम-भाव से होता है, परन्तु '**गुरु**'–**कर्तृ-भाव** से तथा '**देवता**'–**करण-भाव** से कार्य करते हैं।
- यद्यपि **परमेश्वर की अनुग्रह-शक्ति**–'**गुरु**' और '**देवता**' दोनों में पड़ती है, तथापि व्यक्ति-गत विकास की दृष्टि से इनमें तार-तम्य रहता है। जो **जीवाणु–तत्त्व-भेद** के क्रम से उर्ध्व-गति के फल-स्वरूप '**माया**' का अतिक्रम करने में समर्थ होते हैं, वे **मल-पाक** के कारण **भगवत्-कृपा** को प्राप्त कर '**देवता-पद**' पर आरूढ़ होते हैं। यहाँ '**माया**' के अन्तर्गत रहनेवाले **देवताओं की चर्चा** नहीं हो रही है। '**मायातीत देवता**' की एक-मात्र '**शुद्ध देह**' ही रहती है, '**अशुद्ध देह**' नहीं रहती, परन्तु '**गुरु**' की अवस्था भिन्न होती है। **मल** यदि अत्यन्त परिपक्व होता है, तो **चैतन्य-शक्ति का अवतरण** भी अवश्यम्भावी होता है। **मल-पाक की तीव्रता** के कारण **कर्तृ-भाव का आवेश** भी होता है और तभी **जीवाणु–अणु-दीक्षा** प्राप्त कर '**गुरु**' का अधिकार लाभ करते हैं।
- **तत्त्व-भेद** के क्रम से '**गुरु**'-अधिकार-प्राप्त जीवाणुओं का जितना **आत्मिक विकास** होता है, उतना ही अच्छा होता है। जो जिस **तत्त्व** में अवस्थित होता है, '**गुरु**'-पद पर अधिरूढ़ होने पर उसका '**मायिक देह**' उसी **तत्त्व** का हो जाता है, परन्तु **भगवान् के अनुग्रह** से जिस '**विशुद्ध देह**' या '**वैन्दव देह**' की प्राप्ति होती है, वह '**गुरु**'-पद-वाच्य सभी जीवाणुओं के लिए एक ही प्रकार का होता है।
- जब तक '**माया-तत्त्व**' का भेदन नहीं होता, तब तक '**गुरु**' के दो शरीर होते हैं–१. **गुरु-प्रदत्त** '**शुद्ध देह**', जो '**महा-माया**' या '**कुण्डलिनी**' के उपादान से गठित होती है और २. अपना-अपना '**मायिक शरीर**', जो जीवाणु के क्रम-विकास की मात्रा के अनुसार किसी-न-किसी **तत्त्व** के आश्रित रहता है अर्थात् किसी का '**मायिक स्थूल देह**'–**पार्थिव**, किसी का **जलीय**, किसी का **तैजस** इत्यादि होता है।
- देह के विकास से अभिप्राय है–देह के उपादान को **निम्न-वर्ती तत्त्व** से **ऊर्ध्व तत्त्व** में परिणत करना। इस प्रकार **पार्थिव देह–जलीय देह** में और **जलीय देह**–**तैजस देह** में परिणत हो सकती है।
- **भगवान् के अनुग्रह की प्राप्ति** उक्त **तत्त्व-भेद**-रूपी **उत्कर्ष** पर निर्भर नहीं करती क्योंकि यह **उत्कर्ष प्राकृतिक क्रम-विकास** का फल होता है। **चैतन्य-शक्ति का अवतरण**–एक-मात्र **मल की परिपक्वता** के ऊपर ही निर्भर करता है। इसी कारण कोई तो '**पृथ्वी-तत्त्व**' का भेदन किए बिना ही **भगवद्-अनुग्रह** को प्राप्त हो जाते हैं और कोई **माया-तत्त्व** का अति-क्रम करके भी उसे प्राप्त नहीं होते।

✦ तत्त्व-भेदन के ऊपर **शक्ति का अवतरण** निर्भर नहीं करता, परन्तु यह निश्चित है कि **'माया-तत्त्व'** का भेदन करने पर भी जब तक **'जीवाणु'** का **मल-पाक-करण**-भाव की अभिव्यक्ति के लिए उपयोगी नहीं होता, तब तक उसके ऊपर **भगवान् की अनुग्रह-शक्ति** सञ्चरित नहीं होती। ऐसे जीवाणुओं को कल्पान्तर के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है क्योंकि **'देव-देह'** की रचना **सृष्टि-समय** में नहीं होती, **सृष्टि के प्राक्-काल** में होती है।

✦ यदि **'माया-भेदन'** न हो, तो कोई बात ही नहीं है क्योंकि जब तक **'माया-भेदन'** नहीं हो जाता, तब तक किसी भी जीवाणु में **मल-पाक** के कारण **भगवान् का शक्ति-पात** होने पर भी **'देवत्व'** का आविर्भाव सम्भव नहीं है। **'माया'** के **भेदन** के बाद जो जीवाणु **मल-पाक** के फल-स्वरूप **भगवद्-अनुग्रह** लाभ की योग्यता प्राप्त करते हैं, उनके ऊपर कल्पान्तर में **शक्ति का अवतरण** होता है। वर्तमान कल्प में ये सभी जीवाणु **'महा-माया'** में लीन रहते हैं। अतएव यह निश्चित है कि किसी **विशिष्ठ कल्प** का **'जीवाणु'-अणु-रूप मल-पाक** के होने पर भी उस कल्प में **'देवत्व'** प्राप्त नहीं कर सकता। यहाँ तक कि **'माया-भेदन'** हो जाने पर भी यह सम्भव नहीं होता। दूसरे कल्प के आरम्भ तक उसे **'महा-माया'** में विश्राम करना पड़ता है।

✦ पहले कहा जा चुका है कि **गुरु में शक्ति के अवतरण की प्रधानता** होती है अर्थात् जितना **मल-पाक** होने पर **कर्तृ-भाव** का आवेश **दीक्षा-काल** में सम्भव होता है, उतना होगा ही। **'माया-भेदन'** न करने पर भी क्षति नहीं होती। यहाँ तक कि किसी **निम्न-वर्ती तत्त्व** में अवस्थान करने पर भी क्षति नहीं होती क्योंकि **गुरु-भाव** की अभिव्यक्ति में **जीव की स्व-कृत ऊर्ध्व-गति** की मात्रा का निर्देश आवश्यक नहीं होता।

✦ मल के ठीक-ठीक परिपक्व होने पर, **स्वीय विकास** के फल-स्वरूप जो जहाँ है, वहाँ से ही भगवदनुग्रह लाभ करके **शुद्ध देह** तथा **आचार्य का अधिकार** प्राप्त कर सकता है, परन्तु यदि उसका **'माया-तत्त्व-भेदन'** हो जाता है, तो उसे नए जन्म के प्रारम्भ तक अपेक्षा करनी पड़ती है।

✦ यह सर्वत्र ही सत्य है कि **देवता-'गुरु'** के अधीन हैं। **देवता** स्वभावतः **'महा-माया'** के राज्य के अधिवासी हैं, परन्तु **'गुरु'-महा-माया** के राज्य के अधिवासी होकर भी, एक ही साथ **माया-राज्य** के भी अधिवासी हो सकते हैं। अवश्य ही यहाँ **सृष्टि-कालीन गुरु** की बात कही जा रही है, जिनके **'माया'** और **'शुद्ध'**-दोनों देह होती हैं। **सृष्टि के अतीत गुरु** की बात यहाँ नहीं कही जा रही है-वे **माया-देह**-रहित तथा **विशुद्ध वैन्दव देह** से सम्पन्न होते हैं।

✦ सृष्टि के पूर्व **सृष्टि की मूल उपादान-स्वरूप** एक वस्तु रहती है। आपाततः उसे **'जड़'** कहा जा सकता है। इसकी एक दिशा (भीतरी) **शुद्ध** होती है और दूसरी (बाहरी) **अशुद्ध** होती है। जब तक **सृष्टि का उदय** नहीं होता, तब तक यह **आन्तर-बाह्य विभाग** समझ में नहीं आ सकता। यहाँ तक कि यह **अचित्-स्वरूप मूल उपादान** भी समझ में नहीं आ सकता, परन्तु जब सृष्टि के पूर्व में **परमेश्वर की**

दृष्टि शुद्धांश पर पड़ती है, तब वह **ज्योति-रूप** में उज्ज्वल होकर चमक उठता है। शुद्ध के बाहर जो अशुद्ध अंश है, वह **छाया या अन्धकार** के रूप में इस **ज्योति-स्वरूप** को घेर लेता है। यह **शुद्धांश** या ज्योति–'**महा-माया**' है और वह **बाहर की छाया**–'**माया**' है।

- सूक्ष्म रूप से देखने पर यह पता लगता है कि उक्त दोनों में एक ही **अचित् सत्ता** है। यह शुद्ध होकर स्तर-स्तर में **तत्त्व**-रूप से अभिव्यक्त होती है, परन्तु ये **तत्त्व–अचित्** के मूल विभाग नहीं हैं। **अचिद्** का मूल विभाग है–'**पञ्च-कला**'। इनमें दो कलाएँ–**शुद्धांश** में और तीन कलाएँ–**अशुद्धांश** में हैं। प्रत्येक '**कला**' अवान्तर-भाव से **तत्त्व** के रूप में अभिव्यक्त होती है। तदनुसार **ज्योतिर्मय राज्य में पाँच तत्त्व** एवं '**माया**' या **छाया-राज्य** में **इकतीस तत्त्व** अभिव्यक्त होते हैं।
- **पञ्च-कलाएँ** एक दूसरे के बाद अधिकतर **बहिर्मुखी** होती हैं। उसी प्रकार इनसे **अभिव्यक्त तत्त्व** भी इन्हीं के समान ही एक के बाद दूसरे अधिकतर **बहिर्मुख** होते हैं। जहाँ **बहिर्मुखता की पराकाष्ठा है**, उसी का नाम '**पृथ्वी**' है। इसी प्रकार जहाँ **अन्तर्मुखता की चरम सीमा है**, उसका नाम '**शिव**' या '**महा-माया**' है। वस्तुतः वही '**कुण्डलिनी**'-स्वरूपा है।
- '**शिव**'-नाम से परिचित होने पर भी उक्त '**शिव**'-**तत्त्व** वस्तुतः **विशुद्ध जड़-वस्तु** है। इसी का नाम '**आदि-तत्त्व**' या '**विन्दु**' है। '**तत्त्वातीत शिव**' या **परमेश्वर** इससे पृथक् हैं।
- स्तर-स्तर में उक्त '**तत्त्व**' सुसज्जित हैं। विश्व में सर्वत्र यह **क्रम-विन्यास** दृष्टि-गोचर होता है। प्रत्येक '**तत्त्व**' से अनेक **भुवनों** का आविर्भाव होता है। **तत्त्वों** की भाँति '**भुवन**' भी गुण, क्रिया, शक्ति आदि के विकास के तार-तम्य के अनुसार ऊपर-नीचे परस्पर शृङ्खला-बद्ध रहते हैं। ऊर्ध्व प्रदेश से सर्वापेक्षा निम्न-तम प्रदेश-पर्यन्त इन **भुवनों** की समष्टि ही जीव के लिए '**विश्व**' के नाम से प्रसिद्ध होती है।
- जीव अपने-अपने अधिकार और योग्यता के अनुसार प्रत्येक स्तर में विद्यमान रहते हैं। '**सृष्टि-काल**' में अर्थात् विश्व में अवस्थान के समय जीव **देह-युक्त** ही रहता है, परन्तु '**प्रलय-अवस्था**' में जीव के देह नहीं रहती। उस समय जीव–साक्षात् या परम्परा-रूप से '**माया**' में लीन होकर **सुषुप्त**-वत् स्थिर रहता है। अथवा यदि किसी कौशल से किसी का '**माया-भेदन**' हो जाता है, तो वह '**महा-माया**' में सुषुप्त-वत् लीन रहता है।
- '**माया**' में जो **इकत्तीस तत्त्व** हैं, उनमें से प्रत्येक का आश्रय लेकर जीव रहता है और रह सकता है। इन सब **तत्त्वों** में **जन्य-जनक भाव** अथवा **अधः-ऊर्ध्व विभाग** हैं, यह बात पहले ही कही जा चुकी है। तदनुसार **तत्त्व-वर्ती जीव-समूह** के भी **श्रेणी-विभाग** होते हैं, परन्तु ये **श्रेणी-विभाग-तत्त्व** के आपेक्षिक **उत्कर्ष-मूलक** होते हैं। उससे जीव के **स्वकीय उत्कर्ष** का परिचय नहीं मिलता।
- '**प्रलय**'–जड़ की क्रिया की अपेक्षा रखती है। वह **जीव की साधना** के अधीन नहीं है। जब उपादान में **बहिर्मुखी प्रेरणा** आती है, तब **सृष्टि की ओर प्रवृत्ति** होती है। पक्षान्तर में, जब उपादान में **सङ्केत**-भाव आता है, तब यह **प्रवृत्ति-निवृत्ति** होकर **केन्द्र की ओर आकर्षण** बढ़ने लगता है और चरम अवस्था में मूल उपादान-रूप-केन्द्र में स्थिति हो जाती है।

✦ अभिव्यक्ति के नियमानुसार जो जीव मूल उपादान का अतिक्रम करके 'महा-माया' में अवस्थान करते हैं, उनमें से कोई-कोई मल-पाक के तार-तम्य से नवीन सृष्टि में देव-भाव में आविर्भूत होते हैं। उनकी देह 'वैन्दव' देह होती है। वे स्वभावतः मायातीत होते हैं। इसी से शुद्ध होने पर भी वे क्रम-विकास-नियम के अधीन नहीं होते। कहना न होगा कि ये दोनों बातें 'माया' से अतीत भूमि की हैं। ठीक इसी प्रकार अशुद्ध अथवा मायिक देवता भी हैं। इनका रहस्य समझ में आ जाने पर शास्त्र-वर्णित 'आजान देवता', 'कर्म देवता' आदि विभिन्न 'देवता-तत्त्व' भी हृदयङ्गम हो जाते हैं।

मनन करने योग्य बातें

'मन्त्र' है- अव्यर्थ अविनाशी शब्द-स्वरूप में साक्षात् ब्रह्म।

❀ ❀ ❀

जो शास्त्रीय सिद्धान्तों को नहीं जानते, वही यह समझते हैं कि 'मन्त्र'-केवल देवता के प्रति प्रार्थना करने के लिए अनेक शब्दों के स्थान पर एक प्रतीक मात्र है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-मय' शब्द-बह्म जीव के शरीर में रहता है और वह जीव की शक्ति का सूक्ष्म स्वरूप होता है।

❀ ❀ ❀

वर्ण-मयी एवं ध्वनि-मयी 'कुण्डलिनी'-जीवों के शरीरों में परमात्मा का स्वरूप है।

❀ ❀ ❀

प्रत्येक 'मन्त्र' में दो शक्तियाँ होती हैं-१. वाच्य शक्ति और २. वाचक शक्ति। प्रतिपाद्य देवता वाच्य शक्ति होती है और मन्त्र-मयी देवता वाचक शक्ति होती है।

❀ ❀ ❀

जब मन्त्र-स्वरूपा, मन्त्र-गर्भा सगुण 'वाचिका शक्ति'-साधना-द्वारा चैतन्य होती है, तब वह परम सत्य का उद्घाटन करती है, जिससे ब्रह्माण्ड का सच्चा स्वरूप प्रगट हो जाता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्रार्थ' और 'मन्त्र-प्रकिया' को जाने बिना मन्त्र का उच्चारण करना, ओठों का हिलाना मात्र है।

❀ ❀ ❀

सगुण देवता मन्त्र की अधिष्ठातृ देवता एवं निर्गुण देवता 'वाच्य शक्ति' होती है। मूलतः दोनों एक हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' ही 'देवता' है अर्थात् 'परा-चित् -शक्ति' ही मन्त्र-रूप में प्रकट होती है।

❀ ❀ ❀

साधक की चेतना का मन्त्र-रूपा चित्-शक्ति से जब ऐक्य-सम्बन्ध स्थापित होता है, तब भक्ति से निर्मल साधक के मानस के समक्ष मन्त्रार्थ-रूप देवता प्रत्यक्ष हो जाता है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-शास्त्र और योग-शास्त्र

✦ योग-शास्त्र के समुद्धर्त्ता एवं स्रष्टा **महर्षि पतञ्जलि** की **'योग-दर्शन'**-सम्बन्धी अमूल्य देन भी **'मन्त्र-शास्त्र'** का ही एक अभिन्न अङ्ग है। दोनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। **'योग'** की परिभाषा देते हुए **महर्षि पतञ्जलि** ने कहा है–**''योगश्चित्त-वृत्ति-निरोधः।''** अर्थात् **'चित्त-वृत्तियों के निरोध का नाम ही योग'** है। इसी **चित्त-वृत्ति-निरोध**-रूपी कर्म की कुशलता को **'गीता'** में योग के नाम से अभिहित कर परिचय दिया है–**''योगः कर्मसु कौशलम्''** अर्थात् **'चित्त-वृत्ति-निरोध'** की कुशलता ही **आध्यात्मिकता का मूल** है। यही **'चित्त-वृत्ति-निरोध'–'मन्त्र-शास्त्र'** का भी आधार है। इसीलिए सम्भवतः **'योग'** को **आध्यात्मिक जगत्** में इस प्रकार कहा जाता है–**'जीवात्मा-परमात्मयोः संयोगः योगः'**–अर्थात् **जीवात्मा और परमात्मा के संयोग का नाम ही 'योग'** है।

✦ **'योग'** के प्रमुख-तया **आठ अङ्ग** कहे गए हैं–**१. यम, २. नियम, ३. आसन, ४. प्राणायाम, ५. प्रत्याहार, ६. धारणा, ७. ध्यान** और **८. समाधि।**

✦ **'यम'** के **पाँच प्रकार** कहे गए हैं–**१. अहिंसा, २. सत्य ३. अस्तेय, ४. ब्रह्मचर्य** और **५. परिग्रह।**

✦ **'नियम'** भी **पाँच** निर्दिष्ट हुए हैं–**१. शौच, २. सन्तोष, ३. तप, ४. स्वाध्याय** और **५. ईश्वर-प्रणिधान।**

✦ **'यम-नियम'** की उक्त **१० विधियों** का पालन प्रत्येक साधक के लिए परमावश्यक है। इनका पालन किए बिना कोई भी साधना सफल हो ही नहीं सकती क्योंकि जहाँ इनके द्वारा एक साधक की **आध्यात्मिक प्रगति** होती है, वहाँ **ऐश्वर्य-प्राप्ति** भी होती है।

✦ **'योग-दर्शनोक्त'** उक्त **'यम-नियम'** सर्व-साधारण में प्रचलित तथा सबके उपयुक्त एवं सर्व-मान्य हैं, किन्तु **'रुचीनां वैचित्र्यात्'** होने से **'ब्राह्मण-मण्डलोपनिषद्'** में उल्लिखित **'यम-नियम'** साधना की दृष्टि से अधिक महत्त्व-पूर्ण तथा साधकोपयोगी हैं। इस उपनिषद् के अनुसार **पाँच 'यम'** हैं–**१. शीतोष्ण आहार, २. निद्रा-विजय, ३. सर्वदा शान्ति, ४. निश्चलत्व** और **५. विषयेन्द्रिय-निग्रह।**

✦ **'नियम'** नौ हैं–**१. गुरु-भक्ति, २. सत्य-मार्गानुरक्ति, ३. सुखागत-वस्तु में अनुराग, ४. उस वस्तु के अनुभव से तुष्टि, ५. निःसङ्गता, ६. एकान्त-वास, ७. मनो-निवृत्ति, ८. फल की अनभिलाषा ९. वैराग्य-भाव।**

✦ **'यम-नियम'** यद्यपि कुछ कष्ट-साध्य हैं, परन्तु **सद्यः फल-प्रद** हैं, अतः आध्यात्मिक महत्त्व रखते हैं।

✦ **'आसन'–स्थिर सुख को कहते हैं–'स्थिर-सुखमासनम्'। स्थिर सुख से तात्पर्य यह है कि जिस** प्रकार भी तथा जिस **'आसन'** द्वारा चिर-काल तक **'सु-स्थिति'** रह सके। **स्थिर आसन** के ही **'पद्मासन', 'सिद्धासन'** आदि अनेक भेद हैं, जो **जप, ध्यान, अर्चा** आदि की दृष्टि से उपयोगी होते हैं।

✦ '**मन्त्र-शास्त्र**' में '**योग**' के अङ्ग–'**आसन**' की विशेष उपयोगिता बतलाई गई है क्योंकि '**आसन**' पर '**सिद्धि**' तथा '**नियन्त्रण**' प्राप्त होने पर ही सांसारिक बन्धनों को सरलता से जीता जा सकता है।

✦ '**प्राणायाम**' उस अवस्था-विशेष को कहते हैं, जिसके सम्पन्न होने पर **श्वास-प्रश्वास की गति** विच्छिन्न हो जाए–'**तस्मिन् सति श्वास-प्रश्वासयोर्गति-विच्छेदः प्राणायामः।**' यह कहना भी कोई अत्युक्ति न होगी कि '**प्राणायाम**' ही '**निदिध्यासन**' का दूसरा नाम है। **योग-स्थिति** के लिए '**प्राणायाम**' या '**निदिध्यासन**' की महत्ता स्वतः स्पष्ट है क्योंकि बिना '**प्राणायाम**'–**श्वास-प्रश्वास पर पूर्ण अधिकार** हो ही नहीं सकता–'**चित्त-वृत्ति-निरोध**' भी सम्भव नहीं। इसलिए '**प्राणायाम**'–साधना के लिए '**योग**' एवं '**मन्त्र-शास्त्र**' दोनों की दृष्टि से आवश्यक है। साथ ही '**अन्तः-शुद्धि**' के लिए इसका बहुत ही महत्त्व है।

✦ '**प्रत्याहार**' के विषय में **महर्षि पतञ्जलि** ने लिखा है–'**स्व-विषयासम्प्रयोगे चित्त-स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।**' अर्थात् अपने-अपने विषयों में **इन्द्रियाँ** जब **अनासक्त** होकर, **अन्तर्मुखी हो अपने स्वरूप में ही तदाकार** तथा **तल्लीन** हो जाती हैं, तो वह '**प्रत्याहार**' कहलाता है। '**प्रत्याहार**' द्वारा सांसारिक विषयों से **मानव-मन** ऊपर उठ जाता है तथा **सर्व-वस्तु-त्याग की क्षमता** प्राप्त होती है। अतः **योगियों** तथा '**मन्त्र-शास्त्र**' के साधकों के लिए '**प्रत्याहार**' का महत्त्व प्रकट ही है।

✦ '**धारणा**' को साधारण-तया '**चक्र-ध्यान**' भी कहते हैं। '**धारणा**' के विषय में '**योग-दर्शन**' में लिखा है–'**देश-बन्धश्चित्तस्य धारणा।**' अर्थात् **षट्-चक्र**-रूप जो **देश-बन्ध** हैं, उनमें **चित्त-स्थिति** होना ही '**धारणा**' है। अतः '**चक्र-ध्यान**' भी '**धारणा**' ही को कहा जा सकता है। '**ध्यान**' के विषय में कहा गया है कि '**तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्**' अर्थात् **षट्-चक्रों में तल्लीनता** तथा **एकात्मकता एवं एक-तानता** होना ही '**ध्यान**' है। इस प्रकार '**धारणा**' और '**ध्यान**' को '**जप-भावना**' भी कहा जा सकता है। '**जप-भावना**' का तात्पर्य '**तज्जपस्तदर्थ-भावनम्**' के अनुसार **तदर्थ-भावना** से है। बिना '**ध्यान**' या '**तदर्थ-भावना**' के हमें '**इष्ट-सन्निधि**' तथा '**इष्ट-प्राप्ति**' कदापि सम्भव नहीं, अपितु अनिष्ट की सम्भावना रहती है। '**देवो भूत्वा देवं यजेत्**' के अनुसार **तद्-रूपता** तथा **तद्-रमयता**–'**मन्त्र-साधना**' के लिए आवश्यक है। इसी से '**योग**' के इस प्रमुख अङ्ग पर '**मन्त्र-शास्त्र**' बल देता है क्योंकि '**ध्यान**'–'**मन्त्र-साधना**' का प्रमुख-तम विषय है।

✦ **महर्षि पतञ्जलि** के अनुसार अपने '**स्वरूप-ज्ञान**' की शून्यता होकर, '**चक्र**' के अर्थ-मात्र का आभास होना ही '**समाधि**' है। जैसा कि कहा है–**तदेवार्थ-मात्रा-निर्भासं स्वरूप-शून्यमिव समाधिः।**

✦ '**समाधि**'–**योग का प्रमुख अङ्ग** है। इसे '**फल-दर्शन**' तथा '**फल-स्वरूप-भावना**' भी कहते हैं क्योंकि **समाधि** द्वारा उन-उन अवस्थाओं में उन-उन फलों का स्पष्ट दर्शन होता है। '**फल-स्वरूप-भावना**' के विषय में लिखा है–'**भुवन-ज्ञानं सूर्ये संयमात्**'। अर्थात् **स्व-शरीर** के अन्दर '**सूर्य**' में

ध्यान लगाने से तथा '**सूर्य-काल**' में '**त्राटक**' या '**ध्यान**' करने से **चौदहों भुवनों का ज्ञान** होता है। और–'**चन्द्रे तार-व्यूह-ज्ञानम्**' अर्थात् **स्व-शरीर** के अन्दर '**चन्द्र**' में ध्यान करने से **ताराओं के व्यूह का स्पष्ट ज्ञान** होता है। '**फल-स्वरूप**' के विषय में ऐसे ही अनेक सूत्र हैं। इन्हीं को '**समाधि-फल**' भी कहते हैं।

- **ध्यान, धारणा** और **समाधि**–ये तीनों एक **त्रिपुटी-स्वरूप** हैं। तीनों तत्त्वतः एक ही वस्तु हैं। कहा भी है–'**त्रयमेकत्र संयमः**।' तीनों में कोई विशेष अन्तर नहीं, अपितु तीनों का एक समान महत्त्व है। ये तीनों '**योग**' के **तीन कोष** हैं। इनका महत्त्व '**मन्त्र-शास्त्र**' भी '**तदाकारता**' तथा '**एकत्व**'-प्राप्ति के लिए बारम्बार घोषित करता है क्योंकि यही '**एकत्व**'–'**एक-तानता**' तो साधक की महान्-तम सफलता है, जो '**योग**' तथा '**मन्त्र-शास्त्र**' द्वारा प्रतिपादित है।

- संक्षेप में, '**मन्त्र-शास्त्र**' द्वारा समर्थित तथा निष्पादित **आसन आदि अष्टाङ्गों** की समष्टि ही '**योग**' है और '**योग**' तथा '**मन्त्र-शास्त्र**' परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरा अपूर्ण है। आध्यात्मिक दृष्टि-कोण से तत्त्वतः '**मन्त्र-शास्त्र**' तथा '**योग**' की साधनाएँ परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध रखती हैं। एक के अभाव में दूसरी सफल नहीं हो सकती। यही कारण है कि '**मन्त्र-शास्त्र**' में '**योग**' का महत्त्व बारम्बार प्रतिपादित हुआ है।

- यही नहीं, '**तन्त्र-शास्त्र**' एवं '**मन्त्र-शास्त्र**' के ग्रन्थों में तथा विभिन्न आध्यात्मिक ग्रन्थों में **यौगिक प्रक्रियाओं** तथा **मन्त्र-शास्त्रीय प्रक्रियाओं** का युग-पत् प्रयोग हुआ है। प्रायः सर्वत्र ही '**मन्त्र-शास्त्र**' के प्रसङ्ग में '**योग**' का प्रकरण स्वभावतः प्राप्त होता ही है। महा-देवी की पूजन-पद्धति में लिखा है–'जो साधक **रविवार** को **ऊर्ध्व-सहस्त्र-दलोपरि षड्-दल, तदुपरि चतुर्दल मूलाधार में श्री भगवती** का, जो **पार्थिव रश्मियों** से आवृत हैं, **पूजन** करता है, वह सौभाग्य-पात्र होता है। **चन्द्रवार** को **नाभि** में स्थित **मणि-पूरक चक्र** के मध्यस्थ, **जल-रश्मियों** से आवृत **श्री चक्र का पूजन** करे। **तैजस रश्मियों** से आवृत **श्री-चक्र** का **भौम-वार** के दिन लिङ्ग-देश-स्थित **स्वाधिष्ठान** पर पूजन करे। **बुधवार** को **हृदय-रूपी कमल** पर विराजमान **अनाहत** में स्थित, **वायु-रश्मियों** से आवृत **श्री-चक्र** का क्रमशः पूजन करे। **गुरुवार** को समाहित-चित्त होकर **विशुद्धि-चक्र** पर विराजमान **आकाशांशुओं** से आवृत **श्री-चक्र** का सर्वार्थ-सिद्धि के लिए **यजन-पूजन** आदि करे। **शुक्रवार** को **आज्ञा-चक्र** पर विराजमान तथा **मानसांशुओं** से आवृत **श्री-चक्र** का सौभाग्य-सिद्धि के लिए पूजन करे। **शनिवार** को **कपाल** पर स्थित **ब्रह्म-रन्ध्र** में विराजमान, **सर्व-रश्मियों** से आवृत **सहस्त्रार** में **जगत् की विधातृ-शक्ति का पूजन** करे। इस प्रकार जो व्यक्ति **समाहित-चित्त होकर प्रति-दिन मन से पूजन-यजन** तथा **ध्यान** करता है, वह कभी **रोगी** नहीं होता और न **दरिद्री** ही होता है। शीघ्र ही **ग्रह-पीड़ाओं** से मुक्ति पाकर **पुत्र-पौत्रादि** के द्वारा **वृद्धि** को प्राप्त होता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि **मन्त्र-शास्त्र** तथा **योग-शास्त्र** का तादात्म्य-सम्बन्ध है।

- मन्त्र-चैतन्य, मन्त्र-शिखा और मन्त्र-देवता–ये सभी विषय षट्-चक्र, कुण्डलिनी और प्राणायाम से सम्बन्ध रखते हैं। 'तन्त्र-शास्त्र' के अन्दर 'मानसिक पूजा', 'मानसिक तर्पण', 'मानसिक हवन' आदि विषय विस्तार-पूर्वक वर्णित हैं। ये सभी बातें 'योग' से सम्बन्ध रखती हैं।
- मानस-पूजा–'महा-निर्वाण तन्त्र' में आसन–हृदय, पाद्य–सहस्त्रार-स्थित सोमामृत, अर्घ्य–मन, आचमनीय और स्नान-जल सब–सहस्त्रार अमृत, वसन–आकाश-तत्त्व, गन्ध–पृथिवी-तत्त्व, पुष्प–चित्त-वृत्तियाँ, धूप–प्राण, दीप–तेज-तत्त्व, नैवेद्य–रस-समूह, घण्टा-ध्वनि–अनाहत-नाद, चामर–वायु-तत्त्व और नृत्य को इन्द्रियों की चञ्चलता तथा कर्म कहा है। अन्त में माया-अभाव, अहङ्कार-शून्यता, अराग, ममता का नाश, अमोह, अदम्भ, द्वेष-शून्यता, क्षोभ का अभाव, मात्सर्य-शून्यता और निर्लोभ–ये सभी पुष्पाञ्जलि में दिए जाते हैं।
- मानस-तर्पण–वह्नि-मण्डल के मूलाधार और स्वाधिष्ठान-चक्र–द्वय के आधार पर, सूर्य-मण्डल के मणिपुर और अनाहत-चक्र–द्वय–रूपी पात्र में, सोम-मण्डल के विशुद्ध और आज्ञा-चक्र-द्वय-रूपी परामृत से, जो अमा-कला से स्व-शक्ति और पर-शिव के संयोग से उत्पन्न हुआ है, पर-देवता की तृप्ति होती है। तर्पण का अर्थ है–तृप्ति कराना। इसकी प्रयोग-विधि यह है कि प्राणायाम करके, अपने को अपनी इष्ट पर-देवता में पूर्ण-भाव से समर्पण करना चाहिए। तब इस मानसिक प्रक्रिया के फल-स्वरूप जो एक विशिष्ट आनन्द होगा, उस भाव को भी देवता में समर्पण कर उसकी तृप्ति करनी चाहिए। इस प्रकार कम-से-कम तीन बार करना चाहिए।
- मानसिक हवन–अपने परमात्म-ज्ञान के आधार पर, अन्तरात्म-स्वरूप में चिद्-रूपी कुण्ड में जिसके आनन्द-रूपी मेखला और नाद-विन्दु-रूपी योनि है, यथार्थ-ज्ञान-रूपी अग्नि में स्वाधिष्ठान या मणिपुर-चक्र में, जैसा गुरु-क्रम हो, बहिर्मुखी वृत्तियों की अर्थात् बहिरिन्द्रिय-द्वारा बोधित विषयों की मन-रूपी स्त्रुवा द्वारा प्रथम आहुति दे। आगे अहन्ता, असत्य, पैशुन्य, काम, क्रोध, मद, रुज (रोग), हिंसा, नास्तिक्य, अज्ञान, अदया, दम्भ, कैतव, व्रीडा, अनृजुत्व, दारिद्र्य, शोक, मत्सर, अक्षमा, अमिताहार, भय, निद्रा, सुखेतरता, अधैर्य, दुष्ट-सञ्चार, नीच-सङ्गत, अविद्या, आसुर-भाव, पुण्य-पाप, कृत-अकृत, सङ्कल्प-विकल्प, धर्म-अधर्म इत्यादि की आहुतियाँ 'जुहोमि स्वाहा' मूल-मन्त्र के साथ दी जाती हैं।
- योग-शास्त्र एवं मन्त्र-शास्त्र–इन दोनों का परस्पर अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। 'योग' तथा 'मन्त्र-शास्त्र' दोनों ही एक वस्तु के दो रूप हैं। इसी कारण आध्यात्मिक जगत् में दोनों का समान महत्त्व है। साथ ही प्रत्येक साधक को साधना की सफलता में दोनों का ज्ञान आवश्यक है। कहा भी है–

  मन्त्राभ्यास-योगेन, ज्ञानाज्ञाने विकल्पयेत्। न योगेन विना मन्त्रो, न मन्त्रो बिना हि सः।

  द्वयोः राम! संयोगे, ब्रह्म-संसिद्धि-कारणम् ।।
- 'मन्त्र-शास्त्र' तथा 'योग-शास्त्र' दोनों का संयुक्त ज्ञान ही–सम्यक् सिद्धि का कारण है। निरपेक्ष रूप से केवल किसी एक का ज्ञान, अभीष्ट फल प्रदान नहीं कर पाता।

मनन करने योग्य बातें

पूजा, ध्यान में केवल साधक की साधना-शक्ति ही काम करती है, जब कि 'मन्त्र-साधना' में 'साधना-शक्ति', 'मन्त्र-शक्ति' से मिलकर क्रिया-शील होती है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-शक्ति'-सर्व-शक्ति-मयी है और वह 'साधना-शक्ति' को, जो अपूर्ण रहती है, सामर्थ्य प्रदान करती है तथा विघ्नों का सामना करती है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' की सहायता से 'जीव की शक्ति'-'दैवी शक्ति' में रूपान्तरित हो जाती है, जिससे वह दैवी कार्य को भी सम्पन्न कर सकता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र'-दिव्य माँ का एक विशेष स्वरूप है और वह पराम्बा की भक्ति के द्वारा 'मन्त्र-साधना-शक्ति' से जीव में प्रकट होता है।

❀ ❀ ❀

'वेद-विद्या' तथा 'तन्त्र-विद्या' का मेरु-दण्ड 'मन्त्र-विद्या' ही है।

❀ ❀ ❀

यदि 'मन्त्र-विद्या' की साधना शास्त्र-विधि के अनुसार ठीक-ठीक की जाए, तो हमारा देश पहले ही की तरह गौरवान्वित हो सकता है। पहले ही की तरह पुरुषार्थ तथा सुख और समृद्धि से परिपूर्ण होकर वह पहले जैसा स्वर्गोपम बन सकता है,

❀ ❀ ❀

'मन्त्रों' में 'भगवान-नाम-वाचक मन्त्र' सर्व-श्रेष्ठ होते हैं।

❀ ❀ ❀

'प्रणव' का जप करने और उसके अर्थ की भावना करने से साधक भगवान् के चरण-कमलों तक पहुँच जाता है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-शास्त्रोक्त नाना 'बीज-मन्त्र' भी-दृश्य और अदृश्य रूप दोनों से सम्बन्ध कराकर, तत्तत् बीज से सम्बन्ध-युक्त दैवी-शक्तियों के निकट साधक को पहुँचा देते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-शास्त्र' जैसे गहन विषय को समझने के लिए अन्तः-करण के स्वरूप, शक्ति और व्यापकता पर विचार करने की आवश्कता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' में जो शक्ति रहती है, वह शक्ति 'मन्त्र' के आश्रय से अन्तः-करण में प्रकट हो जाती है।

❀ ❀ ❀

'श्रीगणेश'-नाम-साधना

श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति
नाम-साधना

श्रीगणपति
नाम-साधना

श्रीसुब्रह्मण्य-विनायक
नाम-साधना

श्रीविघ्न-गणेश
नाम-साधना

नवाक्षर-'श्रीगणपति'-नाम-साधना

'वीरभद्रोड्डीश तन्त्र' के अनुसार कुम्हार के चाक की मिट्टी से भगवान् गणेश की प्रतिमा बनाकर प्रति-दिन 'ॐ गं गणपतये नमः' नवाक्षर-मन्त्र का १००० बार जप करे, तो सात दिनों में 'मन्त्र' सिद्ध होता है। फिर इस **नवाक्षर मन्त्र** का प्रति-दिन **जप** करे, तो **बुद्धि का विकास** होता है। **छः मास लगातार जप** करे, तो **धन की प्राप्ति** होती है। जप अपराह्न या संन्ध्या काल में '**वर्ण-माला**' में निम्न प्रकार से करना चाहिए–

ॐ

१. अं ॐ गं गणपतये नमः अं
२. आं ॐ गं गणपतये नमः आं
३. इं ॐ गं गणपतये नमः इं
४. ईं ॐ गं गणपतये नमः ईं
५. उं ॐ गं गणपतये नमः उं
६. ऊं ॐ गं गणपतये नमः ऊं
७. ऋं ॐ गं गणपतये नमः ऋं
८. ॠं ॐ गं गणपतये नमः ॠं
९. लृं ॐ गं गणपतये नमः लृं
१०. लॄं ॐ गं गणपतये नमः लॄं
११. एं ॐ गं गणपतये नमः एं
१२. ऐं ॐ गं गणपतये नमः ऐं
१३. ओं ॐ गं गणपतये नमः ओं
१४. औं ॐ गं गणपतये नमः औं
१५. अं ॐ गं गणपतये नमः अं
१६. अः ॐ गं गणपतये नमः अः
१७. कं ॐ गं गणपतये नमः कं
१८. खं ॐ गं गणपतये नमः खं
१९. गं ॐ गं गणपतये नमः गं
२०. घं ॐ गं गणपतये नमः घं
२१. ङं ॐ गं गणपतये नमः ङं
२२. चं ॐ गं गणपतये नमः चं
२३. छं ॐ गं गणपतये नमः छं
२४. जं ॐ गं गणपतये नमः जं
२५. झं ॐ गं गणपतये नमः झं
२६. ञं ॐ गं गणपतये नमः ञं
२७. टं ॐ गं गणपतये नमः टं
२८. ठं ॐ गं गणपतये नमः ठं
२९. डं ॐ गं गणपतये नमः डं
३०. ढं ॐ गं गणपतये नमः ढं
३१. णं ॐ गं गणपतये नमः णं
३२. तं ॐ गं गणपतये नमः तं
३३. थं ॐ गं गणपतये नमः थं
३४. दं ॐ गं गणपतये नमः दं
३५. धं ॐ गं गणपतये नमः धं
३६. नं ॐ गं गणपतये नमः नं
३७. पं ॐ गं गणपतये नमः पं
३८. फं ॐ गं गणपतये नमः फं
३९. बं ॐ गं गणपतये नमः बं
४०. भं ॐ गं गणपतये नमः भं
४१. मं ॐ गं गणपतये नमः मं
४२. यं ॐ गं गणपतये नमः यं
४३. रं ॐ गं गणपतये नमः रं
४४. लं ॐ गं गणपतये नमः लं
४५. वं ॐ गं गणपतये नमः वं
४६. शं ॐ गं गणपतये नमः शं
४७. षं ॐ गं गणपतये नमः षं
४८. सं ॐ गं गणपतये नमः सं
४९. हं ॐ गं गणपतये नमः हं
५०. ळं ॐ गं गणपतये नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा–

१०१. अं ॐ गं गणपतये नमः अं
१०२. कं ॐ गं गणपतये नमः कं
१०३. चं ॐ गं गणपतये नमः चं
१०४. टं ॐ गं गणपतये नमः टं
१०५. तं ॐ गं गणपतये नमः तं
१०६. पं ॐ गं गणपतये नमः पं
१०७. यं ॐ गं गणपतये नमः यं
१०८. शं ॐ गं गणपतये नमः शं

दशाक्षर-'श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति'-नाम-साधना

नाम-चिन्तन-'क्षिप्र'-शब्द का अर्थ है-सजीव, आशुगामी, अविलम्ब एवं 'प्रसादन'-शब्द का अर्थ है-सांत्वना देनेवाले, ढाढ़स देनेवाले, आनन्दित करनेवाले, कल्याण करनेवाले, अनुग्रह करनेवाले और 'गणपति'-शब्द का अर्थ है-सर्व-साक्षी विश्वात्मा। इस प्रकार 'श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति'-नाम के द्वारा शीघ्र कल्याण करनेवाले सर्व-साक्षी विश्वात्मा का चिन्तन-मनन किया जाता है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति-दशाक्षर-मन्त्रस्य श्रीगणक ऋषिः। विराट् छन्दः। श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति देवता। अमुक-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि ॐ श्रीगणक-ऋषये नमः। मुखे ॐ विराट्-छन्दसे नमः। हृदये ॐ श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये देवतायै नमः। अमुक-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ। ('अमुक'-कामना के स्थान पर जो कामना हो वह कहना चाहिए।)

कर-न्यास-गां अंगुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुम्। गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। गः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुम्। गौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्।

ध्यान-

पाशांकुशौ कल्प-लतां विषाणं, दधत् स्व-शुण्डाहित-बीजपूरः।
रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दु-मौलिर्हारोज्ज्वलो हस्ति-मुखोऽवताद् वः ।।

अर्थात् हाथों में पाश, अंकुश, कल्प-लता और गज-दन्त। अपनी सूँड़ पर एक बीजपूर रखे हुए। रक्त-वर्ण, त्रि-नेत्र, मस्तक पर तरुण चन्द्र, गले में उज्ज्वल हार और गज के समान मुखवाले भगवान् श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपति हमारी रक्षा करें।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीक्षिप्र-प्रसादन-गणपतये समर्पयामि नमः।

मन्त्र- गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः (१० अक्षर)। वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना चाहिए-

ॐ

१. अं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः अं
२. आं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः आं
३. इं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः इं
४. ईं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ईं
५. उं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः उं
६. ऊं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ऊं
७. ऋं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ऋं
८. ॠं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ॠं
९. ऌं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ऌं
१०. ॡं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ॡं
११. एं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः एं
१२. ऐं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ऐं
१३. ओं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ओं
१४. औं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः औं
१५. अं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः अं
१६. अः गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः अः
१७. कं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः कं
१८. खं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः खं
१९. गं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः गं
२०. घं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः घं
२१. ङं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ङं
२२. चं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः चं
२३. छं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः छं
२४. जं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः जं
२५. झं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः झं
२६. ञं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ञं
२७. टं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः टं
२८. ठं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ठं
२९. डं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः डं
३०. ढं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ढं
३१. णं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः णं
३२. तं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः तं
३३. थं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः थं
३४. दं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः दं
३५. धं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः धं
३६. नं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः नं
३७. पं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः पं
३८. फं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः फं
३९. बं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः बं
४०. भं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः भं
४१. मं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः मं
४२. यं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः यं
४३. रं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः रं
४४. लं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः लं
४५. वं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः वं
४६. शं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः शं
४७. षं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः षं
४८. सं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः सं
४९. हं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः हं
५०. ळं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः ळं

क्षीं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः अं
१०२. कं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः कं
१०३. चं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः चं
१०४. टं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः टं
१०५. तं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः तं
१०६. पं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः पं
१०७. यं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः यं
१०८. शं गं क्षिप्र-प्रसादनाय नमः शं

होम– १. यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत और अन्न से 'होम' करे, तो अन्न की वृद्धि होती है।
२. 'पायस' से 'होम' करे, तो ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।
३. 'घृत' से होम करे, तो सभी लोग वशीभूत होते हैं।

अष्टाक्षर-'श्रीसुब्रह्मण्य-विनायक'-नाम-साधना

नाम-चिन्तन-'सु+ब्रह्मण्य'-नाम-भगवान् कार्तिकेय का नाम है। आपके इस नाम से विशेष भाव सूचित होते हैं। 'यज्ञ' में सूक्ष्म रूप से वरण किए जानेवाले १६ सूक्ष्म पुरोहितों में से एक आप हैं। शास्त्रों के अनुसार आपकी सूक्ष्म उपस्थिति के बिना कोई भी 'यज्ञ' सम्पन्न नहीं हो सकता। 'विनायक'-नाम से भी बाधाओं को हटानेवाले, सङ्कटों को दूर करनेवाले का बोध होता है। संक्षेप में, 'श्रीसुब्रह्मण्य-विनायक'-नाम के द्वारा दिव्य भावों से परिपूर्ण सङ्कटों को दूर करनेवाले का चिन्तन-मनन किया जाता है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीसुब्रह्मण्य-विनायक-अष्टाक्षर-मन्त्रस्य श्रीअग्नि ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीसुब्रह्मण्य-विनायक देवता। अभीष्ट-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीअग्नि-ऋषये नमः। मुखे गायंत्री-छन्दसे नमः। हृदये श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय नमः। अभीष्ट कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। रूं मध्यमाभ्यां वषट्। रैं अनामिकाभ्यां हुम्। रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। रः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-रां हृदयाय नमः। रीं शिरसे स्वाहा। रूं शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुम्। रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। रः अस्त्राय फट्।

ध्यान-

रक्ताम्बरं रक्त-वर्णं, रक्त-गन्धानुलेपनं। रक्त-पुष्पैः पूज्यमानं, भक्त-पातक-हारिणम् ।।
मुद्गरं च तथा शक्तिं, कमलं चांकुशं तथा। हस्तैर्दधानं चन्द्रास्यं, नानाभूषण-भूषितम् ।।
रिपु-क्षय-करं देवं, सुब्रह्मण्य-गणाधिपम् ।।

अर्थात् शत्रुओं का नाश करनेवाले, भक्तों के कष्टों को दूर करनेवाले, रक्त-वस्त्र, रक्त-वर्ण, रक्त-चन्दन धारण करनेवाले एवं रक्त-पुष्पों से पूजित श्रीसुब्रह्मण्य-गणपति का ध्यान मैं करता हूँ, जो अपने चारों हाथों में क्रमशः मुद्गर, शक्ति, कमल एवं अंकुश धारण किए हुए हैं।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीसुब्रह्मण्य-विनायकाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ह्रीं ॐ गणेशाय नमः (८ अक्षर)। वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना चाहिए-

ॐ

१. अं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः अं
२. आं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः आं
३. इं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः इं
४. ईं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ईं
५. उं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः उं
६. ऊं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ऊं
७. ऋं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ऋं
८. ॠं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ॠं
९. ऌं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ऌं
१०. ॡं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ॡं
११. एं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः एं
१२. ऐं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ऐं
१३. ओं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ओं
१४. औं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः औं
१५. अं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः अं
१६. अः ह्रीं ॐ गणेशाय नमः अः
१७. कं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः कं
१८. खं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः खं
१९. गं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः गं
२०. घं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः घं
२१. ङं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ङं
२२. चं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः चं
२३. छं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः छं
२४. जं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः जं
२५. झं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः झं
२६. ञं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ञं
२७. टं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः टं
२८. ठं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ठं
२९. डं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः डं
३०. ढं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ढं
३१. णं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः णं
३२. तं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः तं
३३. थं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः थं
३४. दं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः दं
३५. धं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः धं
३६. नं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः नं
३७. पं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः पं
३८. फं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः फं
३९. बं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः बं
४०. भं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः भं
४१. मं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः मं
४२. यं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः यं
४३. रं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः रं
४४. लं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः लं
४५. वं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः वं
४६. शं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः शं
४७. षं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः षं
४८. सं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः सं
४९. हं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः हं
५०. ळं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०८ तक जप करे। यथा–

१०१. अं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः अं
१०२. कं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः कं
१०३. चं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः चं
१०४. टं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः टं
१०५. तं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः तं
१०६. पं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः पं
१०७. यं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः यं
१०८. शं ह्रीं ॐ गणेशाय नमः शं

होम– यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत एवं पायस से 'होम' करना चाहिए।

षडक्षर-'श्रीविघ्न-गणेश'-नाम-साधना

नाम-चिन्तन-'**श्रीविघ्न-गणेश**'-नाम का अर्थ स्वतः स्पष्ट है। '**विघ्न**' से बाधाओं, हस्तक्षेपों, रूकावटों, अड़चनों, कठिनाईयों, कष्टों का बोध होता है और '**श्रीविघ्न-गणेश**' नाम से बाधाओं, कठिनाईयों, कष्टों को दूर करनेवाले **विश्वात्मा गणेश** का बोध होता है। अतः '**श्रीविघ्न-गणेश**'-नाम का चिन्तन-मनन करते हुए मन-ही-मन उनसे अपनी बाधाओं, **कष्टों को दूर करने के लिए सतत प्रार्थना** करनी चाहिए और उनके नाम-मन्त्र '**गं विघ्नाय नमः**' का जप करना चाहिए।

विनियोग-**ॐ अस्य श्रीविघ्न-गणेश-षडक्षर-मन्त्रस्य श्रीगणक ऋषिः। विराट् छन्दः। श्रीविघ्न-गणेश देवता। अमुक-विघ्न-निवारणार्थे जपे विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि **श्रीगणक-ऋषये नमः। मुखे विराट् छन्दसे नमः। हृदये श्रीविघ्न-गणेशाय देवतायै नमः। अमुक-विघ्न-निवारणार्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।**

कर-न्यास-**गां अंगुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुम्। गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। गः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।**

षडङ्ग-न्यास-**गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुम्। गौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्।**

ध्यान-'**श्रीविघ्न-गणेश**'-**पश्चिमाम्नायोक्त महा-गणपति के अंश-भूत ६४ विनायकों में से एक** हैं। अतः आपका ध्यान महा-गणपति के रूप में किया जाता है। यथा-

विघ्नेशं विश्व-वन्द्यं सु-विपुल-यशसं लोक-रक्षा-प्रदक्षम्।
साक्षात्-सर्वापदासु प्रशमन-सुमतिं पार्वती-प्राण-सूनुम् ।।
प्रायः सर्वासुरेन्द्रैः स-सुर-मुनि-गणैः साधकैः पूज्यमानम् ।
कारुण्येनान्तरायामित-भय-शमनं विघ्न-राजं नमामि ।।

अर्थात् विघ्नों का शमन करनेवाले, विश्व-पूज्य, सुन्दर अगाध कीर्तिवाले, संसार की रक्षा हेतु प्रकृष्ट रूप से कुशल, सभी प्रकार की आपदाओं के शमन हेतु सुन्दर मतिवाले, करुणा से पूरित होकर भयों को दूर करनेवाले, **विघ्नों को नियन्त्रित करनेवाले पार्वती-पुत्र श्रीविघ्न-गणेश** को मैं प्रणाम करता हूँ।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीविघ्न-गणेशाय समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीविघ्न-गणेशाय समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीविघ्न-गणेशाय घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीविघ्न-गणेशाय दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीविघ्न-गणेशाय निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीविघ्न-गणेशाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- **गं विघ्नाय नमः** (६ अक्षर)। **वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना** चाहिए-

ॐ

१. अं गं विघ्नाय नमः अं
२. आं गं विघ्नाय नमः आं
३. इं गं विघ्नाय नमः इं
४. ईं गं विघ्नाय नमः ईं
५. उं गं विघ्नाय नमः उं
६. ऊं गं विघ्नाय नमः ऊं
७. ऋं गं विघ्नाय नमः ऋं
८. ॠं गं विघ्नाय नमः ॠं
९. ऌं गं विघ्नाय नमः ऌं
१०. ॡं गं विघ्नाय नमः ॡं
११. एं गं विघ्नाय नमः एं
१२. ऐं गं विघ्नाय नमः ऐं
१३. ओं गं विघ्नाय नमः ओं
१४. औं गं विघ्नाय नमः औं
१५. अं गं विघ्नाय नमः अं
१६. अः गं विघ्नाय नमः अः
१७. कं गं विघ्नाय नमः कं
१८. खं गं विघ्नाय नमः खं
१९. गं गं विघ्नाय नमः गं
२०. घं गं विघ्नाय नमः घं
२१. ङं गं विघ्नाय नमः ङं
२२. चं गं विघ्नाय नमः चं
२३. छं गं विघ्नाय नमः छं
२४. जं गं विघ्नाय नमः जं
२५. झं गं विघ्नाय नमः झं
२६. ञं गं विघ्नाय नमः ञं
२७. टं गं विघ्नाय नमः टं
२८. ठं गं विघ्नाय नमः ठं
२९. डं गं विघ्नाय नमः डं
३०. ढं गं विघ्नाय नमः ढं
३१. णं गं विघ्नाय नमः णं
३२. तं गं विघ्नाय नमः तं
३३. थं गं विघ्नाय नमः थं
३४. दं गं विघ्नाय नमः दं
३५. धं गं विघ्नाय नमः धं
३६. नं गं विघ्नाय नमः नं
३७. पं गं विघ्नाय नमः पं
३८. फं गं विघ्नाय नमः फं
३९. बं गं विघ्नाय नमः बं
४०. भं गं विघ्नाय नमः भं
४१. मं गं विघ्नाय नमः मं
४२. यं गं विघ्नाय नमः यं
४३. रं गं विघ्नाय नमः रं
४४. लं गं विघ्नाय नमः लं
४५. वं गं विघ्नाय नमः वं
४६. शं गं विघ्नाय नमः शं
४७. षं गं विघ्नाय नमः षं
४८. सं गं विघ्नाय नमः सं
४९. हं गं विघ्नाय नमः हं
५०. ळं गं विघ्नाय नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०८ तक जप करे। यथा-

१०१. अं गं विघ्नाय नमः अं
१०२. कं गं विघ्नाय नमः कं
१०३. चं गं विघ्नाय नमः चं
१०४. टं गं विघ्नाय नमः टं
१०५. तं गं विघ्नाय नमः तं
१०६. पं गं विघ्नाय नमः पं
१०७. यं गं विघ्नाय नमः यं
१०८. शं गं विघ्नाय नमः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृताक्त हवि से होम करना चाहिए।

'श्रीदुर्गा'-नाम-साधना

विशेष मुहूर्त

प्रत्येक 'शुक्ल पक्ष' की 'अष्टमी', 'नवमी'

'राहु'-काल

सभी 'पर्व' एवं 'शुभ योग'

'शतभिषा-नक्षत्र' आदि-युक्त 'भौमवती अमावास्या'

'भगवती दुर्गा' के नाम महान् फल देनेवाले हैं। इन नामों की साधना में कोई कठिनता या दुरूहता नहीं है। वर्तमान समय में 'श्रीदुर्गा-नाम-साधना'-जैसी सरल साधनाओं द्वारा ही हम पारलौकिक एवं ऐहिलौकिक उन्नति कर सकते हैं।

श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-मन्त्र-साधना

१. श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-मन्त्रों के द्वारा साधना करने हेतु पवित्र होकर पूर्वाभिमुख होकर 'आसन' पर बैठें। गुरु, माता-पिता तथा पितरों को नमस्कार कर भगवान् गणेश, कुल-देवता, इष्ट-देवता-स्वरूपिणी दुर्गाम्बा को प्रणाम करें।

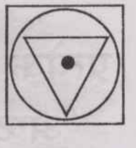

२. अपने दाहिने आसन के अग्र भाग में भूमि पर स-विन्दु 'त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्त्र' का एक मण्डल बनाकर गन्ध-पुष्प से उसका पूजन करें—ॐ ह्रीं आधार-शक्तये नमः।

३. फिर उक्त मण्डल पर 'अस्त्राय फट्' कहकर पञ्च-पात्र रखें और 'नमः' मन्त्र से उस पर जल छिड़कें तथा 'ॐ' मन्त्र से उसमें जल तथा गन्ध-पुष्प डालकर उसमें अंकुश-मुद्रा द्वारा तीर्थों का आवाहन करें—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति ! नर्मदे सिन्धु कावेरि!, जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ।।

४. तब 'फट्' मन्त्र का ७ बार जप करे और श्वेत सर्षप (सरसों) या अक्षत हाथ में लेकर भूतापसारण, विघ्न-निवारण हेतु मन्त्र पढ़े तथा सरसों आदि को उन्हें अपने चारों ओर बिखेर दें—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।।

५. अब अपने आसन की शुद्धि करें। पहले आसन पर निम्न मन्त्र से गन्ध-पुष्प छोड़ें—

ॐ ह्रीं आधार-शक्तये कमलासनाय नमः।

फिर आसन पर हाथ रखकर निम्न प्रकार से आसन-शोधन हेतु 'न्यास' करें—

विनियोग—ॐ अस्य आसन-शोधन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—मेरुपृष्ठ-ऋषये नमः शिरसि, सुतलं-छन्दसे नमः मुखे, कूर्म-देवतायै नमः हृदि, आसनोपवेशने विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

६. इसके बाद हाथ जोड़कर पृथ्वी माता से 'प्रार्थना' करे—

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां नित्यं, पवित्रं कुरु चासनम् ।।

७. इसके बाद निम्न-लिखित चार मन्त्रों द्वारा 'आत्म-शोधन' करें—

ॐ ऐं आत्म-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं विद्या-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा। ॐ क्लीं शिव-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्व-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

८. 'आत्म-शोधन' के पश्चात् 'प्राणायाम' करके 'गुरु-देव' का स्मरण करें। यथा—

ॐ आनन्दमानन्द-करं प्रसन्नं, ज्ञान-स्वरूपं निज-बोध-रूपम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भव-रोग-वैद्यं, श्रीमद्-गुरुं नित्यमहं नमामि ।।

९. इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों द्वारा सभी गुरुओं का पूजन करें। यथा–

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः यं वाय्वात्मकं धूपं घ्रापयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं सन्दर्शयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि ।।

१०. इसके पश्चात् 'भगवान् गणपति' का पूजन करें–

ॐ गजाननं भूत-गणाधि-सेवितं, कपित्थ-जम्बू-फल-चारु-भक्षणम् ।
उमा-सुतं शोक-विनाश-कारकं, नमामि विघ्नेश्वर-पाद-पङ्कजम् ।।

ॐ वक्र-तुण्ड! महा-काय!, सूर्य-कोटि-सम-प्रभ!। निर्विघ्नं कुरु मे देव!, सर्व-कार्येषु सर्वदा ।।

११. गणपति-पूजन के पश्चात् अपने कुल-देवता, इष्ट-देवता का पूजन करें।

१२. कुमारी-बटुक-शक्ति का मानसिक पूजन-गणपति, कुल-देवता, इष्ट-देवता के पूजन के बाद कुमारी, बटुक, शक्ति का पूजन करें। यथा–ॐ श्रीकन्या-कुमारी-बटुक-शक्ति-पादयोः पाद्यं, शिरसि अर्घ्यं, गन्धं, पुष्पं, धूपं, दीपं, नैवेद्यं, ताम्बूलं, दक्षिणां समर्पयामि नमः।

विशेष-यदि 'कुमारी-बटुक-शक्ति' के प्रत्यक्ष पूजन की सुविधा हो, तो प्रत्यक्ष पूजन करना चाहिए। अन्यथा मानसिक रूप से उपर्युक्त संक्षिप्त प्रकार से पूजन करना चाहिए।

१३. इसके पश्चात् श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-मन्त्रों के द्वारा साधना करने हेतु 'सङ्कल्प' करें–

अपने दाहिने हाथ में कुश, तिल, तुलसी, हरीतकी-फल (हल्दी की गाँठ), अक्षत, पुष्प और जल लेकर, दाँएँ घुटने के बल, उत्तर की ओर मुख करके बैठें और निम्न प्रकार से 'लेखन' व 'पाठ' करने हेतु सङ्कल्प करे तथा सङ्कल्प करने के पश्चात् जल-सहित सभी सामग्री को अपने आसन के सम्मुख छोड़ दें–

ॐ विष्णुः ॐ तत् सत् । अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वराह-कल्पे, जम्बू-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्त-देशे, अमुक-पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-संवत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रः, अमुक-शर्मा (वर्मा, गुप्तो, दासो वा) अहं ममात्मनः स-पुत्र-स्त्री बान्धवस्य-अभीष्ट-सिद्धि-कामः श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-मन्त्रैः यथा-शक्ति विलेखन-सहित-पाठं करिष्ये।

उक्त सङ्कल्प में जहाँ-जहाँ 'अमुक'-शब्द आया है, वहाँ-वहाँ तत्सम्बन्धी बातें कहनी चाहिए। उदाहरण-स्वरूप भौमवती अमावास्या, २४ फरवरी २००९ को सायं-काल ७ बजे जब चन्द्रमा-शतभिषा-नक्षत्र में प्रवेश करे, तब 'प्रयाग' में इस प्रकार कहना चाहिए-'प्रयाग'-पुण्य-क्षेत्रे, 'प्लव'-संवत्सरे, 'माघ'-मासे, 'कृष्ण'-पक्षे, 'अमावास्या'-तिथौ, 'भौम'-वासरे...।

१४. 'सङ्कल्प' करने के पश्चात् भूमि पर अक्षत रखकर उसके ऊपर 'घी' का दीपक प्रज्वलित करना चाहिए। फिर गन्ध और अक्षत-पुष्प से 'दीपक' का पूजन कर 'प्रार्थना' करनी चाहिए-

भो! दीप त्वं ब्रह्म-रूप, ह्यन्धकार-निवारक। इमां मया कृतां पूजां, गृहस्तेजः प्रवर्धय ।।

ॐ दीपाय नमः।।

१५. इसके बाद श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र का विनियोगादि करना चाहिए-

विनियोग- **ॐ अस्य श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्रस्य श्रीईश्वर ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्री दुर्गा देवता। दुं वीजं। ह्रीं शक्तिः। ॐ कीलकं। श्री दुर्गा-प्रीत्यर्थं श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र विलिख्ये पाठे च विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास-**श्रीईश्वर-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्री दुर्गा-देवतायै नमः हृदि। दुं-वीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं-शक्तये नमः नाभौ। ॐ-कीलकाय नमः पादयोः। श्री दुर्गा-प्रीत्यर्थं श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र विलिख्ये पाठे च विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।**

कर-न्यास- **ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै तर्जनीभ्यां नमः। ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै मध्यमाभ्यां नमः । ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अनामिकाभ्यां नमः। ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः ।**

अङ्ग-न्यास-**ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै हृदयाय नमः। ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिरसे स्वाहा। ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिखायै वषट्। ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कवचाय हुम्। ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नेत्र-त्रयाय वौषट् । ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अस्त्राय फट् ।**

ध्यान-'ॐ भूर्भुवः स्वः' से 'दिग्-बन्धन' कर भगवती दुर्गा का ध्यानादि करें। यथा-

सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः।
शङ्खं चक्र-धनुः-शराँश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्-कुण्डला ।।

अर्थात् सिंह पर बैठी, चन्द्र (अर्ध-चन्द्र) को शिर पर धारण करनेवाली, मरकत मणि अर्थात् हरित वर्णवाली, चार भुजावाली, जिसमें शङ्ख, चक्र, धनुष और वाण हैं, त्रि-नयना, सम्बद्ध केयूर, हार, कङ्कण पहिने हुई, झनझन करनेवाली काञ्ची और नूपुर तथा रत्नों के कुण्डल को धारण किए 'श्री दुर्गा' हम सबकी दुर्गति-हारिणी हो।

मानस-पूजा-'ध्यान' करने के बाद भगवती दुर्गा का स्थूल पञ्चोपचारों से अथवा मानसिक रूप से पूजन करना चाहिए। यथा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्री दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्री दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्री दुर्गा-प्रीतये घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्री दुर्गा-प्रीतये दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री दुर्गा-प्रीतये निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्री दुर्गा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

१६. यन्त्र-लेखन–'श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र' की **फल-श्रुति** ५ में लिखा है कि **गोरोचन, अलक्तक** (राल, लाल महावर), **कुंकुम, सिन्दूर, कर्पूर** और **त्रि-मधु** (१. घृत, २. मधु, ३. शक्कर) से विधि-पूर्वक लिखकर **'यन्त्र'** को धारण करनेवाला विधि को जानकार **साक्षात् शिव** होता है। यहाँ निर्देशित **'यन्त्र'** के सम्बन्ध में प्रचलित मान्यताओं के अनुसार **दो प्रकार के 'यन्त्र'** का विवरण मिलता है–**१. 'श्री नव-दुर्गा'-युक्त 'पञ्च-दशी'-यन्त्र** एवं **२. 'श्री नव-दुर्गा'-युक्त 'बीसा'-यन्त्र–**

६	१	८
७	५	३
२	९	४

ॐ शुभं शुभं शुभं
ॐ भद्रं भद्रं भद्रं

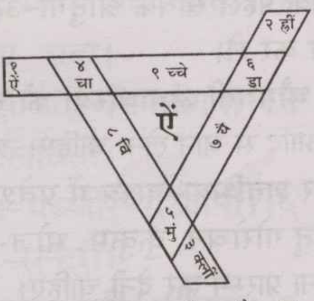

इनमें से किसी एक **'यन्त्र'** को **गोरोचन, अलक्तक, कुंकुम, सिन्दूर, कर्पूर** और **त्रि-मधु** को परस्पर मिश्रित कर **'अनार'** या **'बेल'** की लकड़ी से **'भोज'**-पत्र या **'चाँदी'** आदि शुभ धातु के पतले टुकड़े पर लिखना चाहिए, जिसे धारण किया जा सके।

'श्री नव-दुर्गा'-युक्त 'पञ्च-दशी'-यन्त्र एवं **'बीसा'-यन्त्र** की संख्याएँ क्रम से **१-२-३-४-५-६-७-८-९** यथा-स्थान लिखनी चाहिए और संख्याएँ लिखते समय उनसे सूचित **'प्रणाम'-मन्त्र** को मन-ही-मन कहना चाहिए। यथा–सं० १ लिखते समय–**श्रीशैल-पुत्री- दुर्गायै नमः**, सं० २ लिखते समय–**श्रीब्रह्म-चारिणी-दुर्गायै नमः**, सं० ३ लिखते समय–**श्रीचन्द्र-घण्टा-दुर्गायै नमः**, सं० ४ लिखते समय–**श्रीकूष्माण्डा-दुर्गायै नमः**, सं० ५ लिखते समय–**श्रीस्कन्द-माता-दुर्गायै नमः**, सं० ६ लिखते समय–**श्रीकात्यायनी-दुर्गायै नमः**, सं० ७ लिखते समय–**श्रीकाल-रात्रि-दुर्गायै नमः**, सं० ८ लिखते समय–**श्रीमहा-गौरी-दुर्गायै नमः**, सं० ९ लिखते समय–**श्रीसिद्धि-दात्री- दुर्गायै नमः** मन-ही-मन कहना चाहिए।

१७. पाठ-सहित माला-मन्त्र-लेखन-'**श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र**' की **फल-श्रुति** ६ में लिखा है कि जो **मङ्गलवार की अमावास्या की रात्रि में, चन्द्रमा के शतभिषा नक्षत्र में प्रवेश करने पर पाठ करते हुए, स्तोत्र को लिखता है, वह सम्पत्तियों का भाजन बनता है।** अतः **भौमवती अमावास्या** जैसे **शुभ मुहुर्तों** में प्रस्तुत माला-मन्त्र को लिखकर भी साधक अपनी अभिलाषाएँ पूरी कर सकते हैं। उदाहरण के रूप में **भौमवती अमावास्या, २४ फरवरी २००९** की रात्रि में '**पाठ**' करते हुए आगे प्रकाशित **श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र** का लेखन करना चाहिए।

श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र के लेखन हेतु सादे कागज पर लाल स्याही से-'**सती साध्वी भव-प्रीता**' से '**प्रत्यक्ष ब्रह्म-वादिनी**' तक आगे प्रकाशित **१ से १४ श्लोकों** को यथा-शक्ति लिखना चाहिए।

विशेष-१. '**श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र**' की **फल-श्रुति** में **भौमवती अमावास्या** को '**लेखन-सहित पाठ**' की जो **विशेष साधना** बताई गई है, उसको करने के लिए आवश्यक यह होता है कि पहले साधक **श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र** का **नित्य पाठ** करे और उसे **कण्ठस्थ** कर ले।

२. **भौमवती अमावास्या** को **चन्द्रमा-शतभिषा नक्षत्र** में कब प्रवेश कर रहा है, इसे पहले पचाङ्ग आदि से जान लेना चाहिए। उदाहरणार्थ, **२४ फरवरी, २००९** को **चन्द्रमा-७ बजकर ४६ मिनट पर शतभिषा-नक्षत्र में प्रवेश** कर रहा है। अतः उस समय सभी **पूजन-सामग्री, लेखनी, लेखन हेतु गोरोचन, कुंकुम, भोज-पत्र** एवं **सादे कागज** आदि एकत्रित कर अपने आसन पर बैठ कर साधना प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

३. **भौमवती अमावास्या** को **चन्द्रमा-शतभिषा नक्षत्र** में जितने समय रहे, (उदाहरणार्थ **२४ फरवरी, २००९, मङ्गलवार** को **चन्द्रमा ७ बजकर ४६ मिनट से २५ फरवरी २००९, बुधवार प्रातः ६:५० बजे तक शतभिषा नक्षत्र में है**) उतने समय यथा-शक्ति '**श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र**' का '**पाठ**' कर सादे कागज पर '**लेखन** 'करे और '**नाम**'-**मन्त्रों के अर्थ, भाव** आदि को अधिक-से-अधिक हृदयङ्गम करते हुए उनमें तन्मय होने का प्रयास करे।

४. '**श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र**' के विशेष विधान में उल्लिखित '**श्रीनव-दुर्गा**'-**युक्त** '**पञ्च-दशी**'-**यन्त्र** एवं '**श्रीनव-दुर्गा**'-**युक्त** '**बीसा**'-**यन्त्र**-को जिस **भोज-पत्र**, चाँदी आदि के पतरे पर लिखा गया हो, उसे प्रयोग समाप्त होने के बाद श्रद्धा-पूर्वक **पुरुष-अपने** दाहिने हाथ में तथा **महिलाएँ-अपने बाँएँ हाथ** में धारण करें अथवा अपने **पूजन-कक्ष** में रखकर उसे नित्य **प्रणाम** करें और जब आवश्यक हो, तब उसका **दर्शन कर अपना अभीष्ट कार्य सम्पन्न करें।**

श्री दुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र

।। पूर्व-पीठिका-श्री ईश्वर उवाच ।।

शत-नाम प्रवक्ष्यामि, शृणुष्व कमलानने! यस्य प्रसाद-मात्रेण, दुर्गा प्रीता सदा भवेत्।।१

श्रीईश्वर बोले-हे कमलामुखि! सुनो, वह 'शत-नाम' कहूँगा, जिसके प्रसाद मात्र से दुर्गा सदा प्रसन्न होती हैं।

।। मूल-श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम-माला-मन्त्र ।।

सती साध्वी भव-प्रीता, भवानी भव-मोचिनी।
आर्या दुर्गा जया आद्या, त्रि-नेत्रा शूल-धारिणी।।१
पिनाक-धारिणी चित्रा, चन्द्र-घण्टा महा-तपा।
मनो-बुद्धिरहङ्कारा, चित्त-रूपा चिता चितिः।।२
सर्व-मन्त्र-मयी नित्या, सत्यानन्द-स्वरूपिणी।
अनन्ता भाविनी भाव्या, भव्याऽभव्या सदा-गतिः।।३
शाम्भवी देव-माता च, चिन्ता रत्न-प्रिया सदा।
सर्व-विद्या दक्ष-कन्या, दक्ष-यज्ञ-विनाशिनी।।४
अपर्णाऽनेक-वर्णा च, पाटला पाटलावती।
पट्टाम्बर-परीधाना, कल-मञ्जीर-रञ्जिनी।।५
अमेय-विक्रमा क्रूरा, सुन्दरी सुर-सुन्दरी।
वन-दुर्गा च मातङ्गी, मतङ्ग-मुनि-पूजिता।।६
ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री, कौमारी वैष्णवी तथा।
चामुण्डा चैव वाराही, लक्ष्मीश्च पुरुषाकृतिः।।७
विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना, क्रिया सत्या च बुद्धि-प्रदा।
बहुला बहुल-प्रेमा, सर्व-वाहन-वाहना।।८
निशुम्भ-शुम्भ-हननी, महिषासुर-मर्दिनी।
मधु-कैटभ-हन्त्री च, चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी।।९
सर्वासुर-विनाशा च, सर्व-दानव-घातिनी।
सर्व-शास्त्र-मयी विद्या, सर्वास्त्र-धारिणी तथा।।१०
अनेक-शस्त्र-हस्ता च, अनेकास्त्र-विधारिणी।
कुमारी चैव कन्या च, कैशोरी युवती यती।।११

अप्रौढा चैव प्रौढा च, वृद्ध-माता बल-प्रदा।
महा-देवी मुक्त-केशी, घोर-रूपा महा-बला।।१२
अग्नि-ज्वाला रौद्र-मुखी, काल-रात्रिस्तपस्विनी।
नारायणी भद्र-काली, विष्णु-माया जलोदरी।।१३
शिव-दूती कराली च, अनन्ता परमेश्वरी।
कात्यायनी च सावित्री, प्रत्यक्षा ब्रह्म-वादिनी।।१४

।।फल-श्रुति।।

य इदं च पठेत् स्तोत्रं, दुर्गा-नाम-शताष्टकम्। नासाध्यं विद्यते देवि! त्रिषु लोकेषु पार्वति!।।१

श्रीदुर्गा के एक सौ आठ नामों वाले इस स्तोत्र का पाठ करने से तीनों लोकों में कुछ भी असाध्य नहीं रहता।

धनं धान्यं सुतान् जायां, हयं हस्तिनमेव च। चतुर्वर्गं तथा चान्ते, लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीम्।।२

धन-धान्य, स्त्री-पुत्र, हाथी-घोड़े, चारों वर्ग (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) और अन्त में सनातन मोक्ष को प्राप्त करता है।

कुमारीं पूजयित्वा च, ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम्। पूजयेत् प्रयतो भक्त्या, पठेन्नाम-शताष्टकम्।।३

कुमारी-पूजा कर और देवी का ध्यान कर सावधानी-पूर्वक पूजन कर १०८ नामों का भक्ति के साथ पाठ करे।

तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि! सर्वैः सुर-वरैरपि। राजानो दासतां यान्ति, राज्य-श्रियमवाप्नुयात्।।४

सभी श्रेष्ठ देवों से भी उसे सिद्धि मिलती है। राजा उसके सेवक होते हैं और वह राज्य-लक्ष्मी को प्राप्त करता है।

गोरोचनालक्तक-कुंकुमेन, सिन्दूर-कर्पूर-मधु-त्रयेण।
विलिख्य यन्त्रं विधिना विधिज्ञो, भवेत् सदा धारयतः स्मरारिः।।५

गोरोचन, अलक्तक, कुंकुम, सिन्दूर, कर्पूर और त्रि-मधु से विधि-पूर्वक लिखकर 'यन्त्र' को धारण करनेवाला विधि का जानकार साक्षात् शिव होता है।

भौमावास्यां निशा-भागे, चन्द्रे शतभिषां गते। विलिख्य प्रपठन् स्तोत्रं, स भवेत् सम्पदां पदम्।।६

मङ्गलवार की अमावास्या की रात्रि में, चन्द्रमा के शतभिषा नक्षत्र में प्रवेश करने पर पाठ करते हुए, स्तोत्र को लिख कर, वह सम्पत्तियों का भाजन बनता है।

।। श्रीविश्वसार-तन्त्रे श्रीदुर्गाऽष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम्।।

प्रस्तुत-कर्त्ता : श्री एस०एच० नाबरिया,
८२९ पश्चिम मङ्गलवार पेठ, तिलक चौक, सोलापुर (महाराष्ट्र)

'श्रीशिव'-नाम-साधना

श्रीईशान-शिव
नाम-साधना

श्रीनील-कण्ठ-शिव
नाम-साधना

श्रीउमापति-सदाशिव
नाम-साधना

श्रीरुद्र-शिव
नाम-साधना

षडक्षर-'श्री ईशान-शिव'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-चिन्तन–भगवान् शिव की 'ईशान' मूर्ति प्रत्यक्ष देव सूर्य की अधिदेवता है। सूर्य भगवान् आपकी शक्ति से ही सदैव गतिमान रहते हैं। सूर्य भगवान् को देखते हुए आपको प्रणाम किया जाता है। 'प्रणाम-मन्त्र' इस प्रकार है–'ॐ ईशानाय सूर्य-मूर्तये नमः'। आपको नित्य प्रणाम कर, आपके नाम-मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' अथवा 'नमः शिवाय' का जप करते हुए निर्भय होकर सदा-सर्वदा आनन्द-पूर्वक रहना चाहिए।

विनियोग–ॐ अस्य श्री ईशान-शिव-षडक्षर-मन्त्रस्य श्रीवाम-देव ऋषिः। पंक्तिश्छन्दः। श्री ईशान-शिव देवता। ॐ वीजं। नमः शक्तिः। शिवायेति कीलकं। श्री ईशान-शिव-प्रसन्नार्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–शिरसि श्रीवाम-देवाय-ऋषये नमः। मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः। हृदये श्री ईशान-शिवाय देवतायै नमः। गुह्ये ॐ-वीजाय नमः। पादयोः नमः-शक्तये नमः। नाभौ शिवायेति-कीलकाय नमः। सर्वाङ्गे श्री ईशान-शिव-प्रसन्नार्थे जपे विनियोगाय नमः।

मूर्ति-न्यास–तर्जन्योः ॐ नं तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः मं अघोराय नमः। कनिष्ठयोः शिं सद्यो-जाताय नमः। अनामिकयोः वां वाम-देवाय नमः। अंगुष्ठयोः यं ईशानाय नमः।

कर-न्यास–ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुम्। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास–ॐ हृदयाय नमः। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुम्। वां नेत्र-त्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

ध्यान–

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजत-गिरि-निभं चारु-चन्द्रावतंसम् ।
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशु-मृग-वराभीति-हस्तं प्रसन्नम् ।।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममर-गणैर्व्याघ्र-कृत्तिं वसानम् ।
विश्वाद्यं विश्व-वीजं निखिल-भय-हरं पञ्च-वक्त्रं त्रि-नेत्रम् ।।

अर्थात् चाँदी के पर्वत जैसा उज्ज्वल वर्ण, मस्तक पर अर्द्ध-चन्द्र और रत्नों की राशि जैसी आभावाला सारा शरीर। चार हाथों में कुठार, मृग, वर-मुद्रा और अभय-मुद्रा। प्रसन्न-मुख, कमल के ऊपर विराजमान, वाघ की खाल का वस्त्र। चारों ओर से देव-गण वन्दना कर रहे हैं। संसार के आदि और कारण-भूत भगवान् शिव समस्त प्रकार के भय को नष्ट कर देते हैं। पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुख में तीन नेत्र। इस प्रकार के भगवान् महेश्वर का मैं निरन्तर ध्यान करता हूँ।

मानस-पूजा– लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्री ईशान-शिवाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्री ईशान-शिवाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्री ईशान-शिवाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्री ईशान-शिवाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री ईशान-शिवाय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्री ईशान-शिवाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र–ॐ नमः शिवाय (६ अक्षर)। वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना चाहिए–

ॐ

१. अं ॐ नमः शिवाय अं
२. आं ॐ नमः शिवाय आं
३. इं ॐ नमः शिवाय इं
४. ईं ॐ नमः शिवाय ईं
५. उं ॐ नमः शिवाय उं
६. ऊं ॐ नमः शिवाय ऊं
७. ऋं ॐ नमः शिवाय ऋं
८. ॠं ॐ नमः शिवाय ॠं
९. ऌं ॐ नमः शिवाय ऌं
१०. ॡं ॐ नमः शिवाय ॡं
११. एं ॐ नमः शिवाय एं
१२. ऐं ॐ नमः शिवाय ऐं
१३. ओं ॐ नमः शिवाय ओं
१४. औं ॐ नमः शिवाय औं
१५. अं ॐ नमः शिवाय अं
१६. अः ॐ नमः शिवाय अः
१७. कं ॐ नमः शिवाय कं
१८. खं ॐ नमः शिवाय खं
१९. गं ॐ नमः शिवाय गं
२०. घं ॐ नमः शिवाय घं
२१. ङं ॐ नमः शिवाय ङं
२२. चं ॐ नमः शिवाय चं
२३. छं ॐ नमः शिवाय छं
२४. जं ॐ नमः शिवाय जं
२५. झं ॐ नमः शिवाय झं
२६. ञं ॐ नमः शिवाय ञं
२७. टं ॐ नमः शिवाय टं
२८. ठं ॐ नमः शिवाय ठं
२९. डं ॐ नमः शिवाय डं
३०. ढं ॐ नमः शिवाय ढं
३१. णं ॐ नमः शिवाय णं
३२. तं ॐ नमः शिवाय तं
३३. थं ॐ नमः शिवाय थं
३४. दं ॐ नमः शिवाय दं
३५. धं ॐ नमः शिवाय धं
३६. नं ॐ नमः शिवाय नं
३७. पं ॐ नमः शिवाय पं
३८. फं ॐ नमः शिवाय फं
३९. बं ॐ नमः शिवाय बं
४०. भं ॐ नमः शिवाय भं
४१. मं ॐ नमः शिवाय मं
४२. यं ॐ नमः शिवाय यं
४३. रं ॐ नमः शिवाय रं
४४. लं ॐ नमः शिवाय लं
४५. वं ॐ नमः शिवाय वं
४६. शं ॐ नमः शिवाय शं
४७. षं ॐ नमः शिवाय षं
४८. सं ॐ नमः शिवाय सं
४९. हं ॐ नमः शिवाय हं
५०. ळं ॐ नमः शिवाय ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमः शिवाय अं
१०२. कं ॐ नमः शिवाय कं
१०३. चं ॐ नमः शिवाय चं
१०४. टं ॐ नमः शिवाय टं
१०५. तं ॐ नमः शिवाय तं
१०६. पं ॐ नमः शिवाय पं
१०७. यं ॐ नमः शिवाय यं
१०८. शं ॐ नमः शिवाय शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत-युक्त पायसान्न से होम करना चाहिए।

अष्टाक्षर-'श्री नील-कण्ठ-शिव'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-चिन्तन–मनुष्य प्राय: माया से प्रभावित होकर परस्पर वैर की गाँठ में बँध जाते हैं और अधम-से-अधम स्वरूप को प्राप्त होते हैं। भगवान् शिव का 'नील-कण्ठ'-स्वरूप मनुष्यों के परस्पर वैर-रूपी विष का भक्षण कर, उनका सभी प्रकार से कल्याण करता है। अत: भगवान् नील-कण्ठ के नाम-मन्त्र 'ॐ नमो नील-कण्ठाय' को जपते हुए सभी प्रकार की वैमनस्य-पूर्ण बाधाओं को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

विनियोग–ॐ अस्य श्री नील-कण्ठ-शिव-अष्टाक्षर-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषि:। गायत्री छन्द:। श्री नील-कण्ठ-शिव देवता। अमुक-कष्ट-निवारणार्थे जपे विनियोग:।

ऋष्यादि-न्यास–शिरसि श्री ब्रह्मा-ऋषये नम:। मुखे गायत्री-छन्दसे नम:। हृदये श्री नील-कण्ठ-शिवाय देवतायै नम:। अमुक-कष्ट-निवारणार्थे जपे विनियोगाय नम: अञ्जलौ।

कर-न्यास–हर-हर स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नम:। कपर्दिने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। नील-कण्ठाय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। काल-कूट-विष-भक्षणाय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुम्। श्री कण्ठाय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। शित-कण्ठाय स्वाहा करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास–हर-हर स्वाहा हृदयाय नम:। कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा। नील-कण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्। काल-कूट-विष-भक्षणाय हुं फट् कवचाय हुम्। श्री कण्ठाय स्वाहा नेत्र-त्रयाय वौषट्। शित-कण्ठाय स्वाहा अस्त्राय फट्।

ध्यान–

बालार्कायुत-तेजसं धृत-जटा-जूटेन्दु-खण्डोज्ज्वलम् ।
नागेन्द्रै: कृत-शेखरं जप-वटीं शूलं कपालं करै:।।
खट्वाङ्गं दधतं त्रि-नेत्र-विलसत्-पञ्चाननं सुन्दरम् ।
व्याघ्र-त्वक्-परिधानमब्ज-निलयं श्रीनील-कण्ठं भजे ।।

अर्थात् दस सहस्त्र बाल-सूर्यों जैसा तेज है। शिर पर जटा-जाल है, जो अर्द्ध-चन्द्र से प्रकाशमान है। नागराजों का मुकुट बना है और चार हाथों में जप-माला, शूल, नर-कपाल और खट्वाङ्ग लिए हैं। पाँच सुन्दर मुख हैं प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। वाघ की खाल का वस्त्र है और कमल पर विराजमान हैं। ऐसे भगवान् श्री नीलकण्ठ-शिव की मैं वन्दना करता हूँ।

मानस-पूजा– लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्री नील-कण्ठ-शिवाय समर्पयामि नम:। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्री नील-कण्ठ-शिवाय समर्पयामि नम:। यं वाय्वात्मकं धूपं श्री नील-कण्ठ-शिवाय घ्रापयामि नम:। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्री नील-कण्ठ-शिवाय दर्शयामि नम:। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री नील-कण्ठ-शिवाय निवेदयामि नम:। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्री नील-कण्ठ-शिवाय समर्पयामि नम:।

मन्त्र– ॐ नमो नील-कण्ठाय (८ अक्षर)। वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना चाहिए–

ॐ

१. अं ॐ नमो नील-कण्ठाय अं
२. आं ॐ नमो नील-कण्ठाय आं
३. इं ॐ नमो नील-कण्ठाय इं
४. ईं ॐ नमो नील-कण्ठाय ईं
५. उं ॐ नमो नील-कण्ठाय उं
६. ऊं ॐ नमो नील-कण्ठाय ऊं
७. ऋं ॐ नमो नील-कण्ठाय ऋं
८. ॠं ॐ नमो नील-कण्ठाय ॠं
९. ऌं ॐ नमो नील-कण्ठाय ऌं
१०. ॡं ॐ नमो नील-कण्ठाय ॡं
११. एं ॐ नमो नील-कण्ठाय एं
१२. ऐं ॐ नमो नील-कण्ठाय ऐं
१३. ओं ॐ नमो नील-कण्ठाय ओं
१४. औं ॐ नमो नील-कण्ठाय औं
१५. अं ॐ नमो नील-कण्ठाय अं
१६. अः ॐ नमो नील-कण्ठाय अः
१७. कं ॐ नमो नील-कण्ठाय कं
१८. खं ॐ नमो नील-कण्ठाय खं
१९. गं ॐ नमो नील-कण्ठाय गं
२०. घं ॐ नमो नील-कण्ठाय घं
२१. ङं ॐ नमो नील-कण्ठाय ङं
२२. चं ॐ नमो नील-कण्ठाय चं
२३. छं ॐ नमो नील-कण्ठाय छं
२४. जं ॐ नमो नील-कण्ठाय जं
२५. झं ॐ नमो नील-कण्ठाय झं
२६. ञं ॐ नमो नील-कण्ठाय ञं
२७. टं ॐ नमो नील-कण्ठाय टं
२८. ठं ॐ नमो नील-कण्ठाय ठं
२९. डं ॐ नमो नील-कण्ठाय डं
३०. ढं ॐ नमो नील-कण्ठाय ढं
३१. णं ॐ नमो नील-कण्ठाय णं
३२. तं ॐ नमो नील-कण्ठाय तं
३३. थं ॐ नमो नील-कण्ठाय थं
३४. दं ॐ नमो नील-कण्ठाय दं
३५. धं ॐ नमो नील-कण्ठाय धं
३६. नं ॐ नमो नील-कण्ठाय नं
३७. पं ॐ नमो नील-कण्ठाय पं
३८. फं ॐ नमो नील-कण्ठाय फं
३९. बं ॐ नमो नील-कण्ठाय बं
४०. भं ॐ नमो नील-कण्ठाय भं
४१. मं ॐ नमो नील-कण्ठाय मं
४२. यं ॐ नमो नील-कण्ठाय यं
४३. रं ॐ नमो नील-कण्ठाय रं
४४. लं ॐ नमो नील-कण्ठाय लं
४५. वं ॐ नमो नील-कण्ठाय वं
४६. शं ॐ नमो नील-कण्ठाय शं
४७. षं ॐ नमो नील-कण्ठाय षं
४८. सं ॐ नमो नील-कण्ठाय सं
४९. हं ॐ नमो नील-कण्ठाय हं
५०. ळं ॐ नमो नील-कण्ठाय ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमो नील-कण्ठाय अं
१०२. कं ॐ नमो नील-कण्ठाय कं
१०३. चं ॐ नमो नील-कण्ठाय चं
१०४. टं ॐ नमो नील-कण्ठाय टं
१०५. तं ॐ नमो नील-कण्ठाय तं
१०६. पं ॐ नमो नील-कण्ठाय पं
१०७. यं ॐ नमो नील-कण्ठाय यं
१०८. शं ॐ नमो नील-कण्ठाय शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत से होम करे।

अष्टाक्षर-'श्रीउमापति-सदाशिव'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-चिन्तन-'चरक-संहिता' में महा-प्रलय के बाद की स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि 'उस समय मृत्यु और जीवन नहीं था, उस समय रात्रि-दिवस का विभाग करनेवाला सूर्य भी नहीं था, उस समय शान्त समुद्र के समान ज्ञान-शक्ति-रूपी उमा के साथ एक अखण्ड परिपूर्ण सदाशिव ही थे। उनकी अनन्त शक्तियों के किसी एक भाग में 'माया'-वीज-रूप में थी।' इस प्रकार 'श्रीउमापति-सदाशिव' नाम के द्वारा माया से जनित सभी कष्टों के निवारण के लिए एवं आत्म साक्षात्कार हेतु प्रार्थना करनी चाहिए।

विनियोग-ॐ अस्य श्री उमापति-सदाशिव-अष्टाक्षर-मन्त्रस्य श्रीवाम-देव ऋषिः। पंक्ति छन्दः। श्रीउमापति-सदाशिव देवता। सर्वेष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीवाम-देव-ऋषये नमः। मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः। हृदये श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै नमः। सर्वेष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुम्। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतल-करं-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-ह्रीं हृदयाय नमः। ॐ नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुम्। वां नेत्र-त्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

ध्यान-

बन्धूकाभं त्रि-नेत्रं शशि-शकल-धरं स्मेर-वक्त्रं वहन्तम् ।
हस्तैः शूलं कपालं वरदमभयदं चारु-हासं नमामि ।।
वामोरु-स्तम्भगायाः कर-तल-विलसच्चारु-रक्तोत्पलायाः।
हस्तेनाश्लिष्ट-देहं मणि-मय-विलसद्-भूषणायाः प्रियायाः।।

अर्थात् भगवान् शिव के शरीर की कान्ति बन्धूक पुष्प के समान लाल है। तीन नेत्र हैं। मुख पर मुस्कान है। मस्तक पर अर्द्ध-चन्द्र धारण किए हैं। चार हाथों में १. शूल, २. नर-कपाल, ३. वर-मुद्रा और ४. अभय-मुद्रा धारण किए हैं। बांई जङ्घा पर मणि-जटित आभूषणों से विभूषिता प्रियतमा शक्ति समासीना हैं, जो एक हाथ में सुन्दर लाल कमल लिए हैं और दूसरे हाथ से पति का आलिङ्गन किए हैं। इस प्रकार के भगवान् श्रीउमापति-सदाशिव को मैं प्रणाम करता हूँ।

मानस-पूजा-लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीउमापति-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं (८ अक्षर)। वर्ण-माला में इस मन्त्र का जप निम्न प्रकार से करना चाहिए-

ॐ

१. अं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं अं
२. आं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं आं
३. इं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं इं
४. ईं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ईं
५. उं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं उं
६. ऊं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ऊं
७. ऋं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ऋं
८. ॠं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ॠं
९. ऌं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ऌं
१०. ॡं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ॡं
११. एं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं एं
१२. ऐं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ऐं
१३. ओं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ओं
१४. औं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं औं
१५. अं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं अं
१६. अः ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं अः
१७. कं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं कं
१८. खं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं खं
१९. गं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं गं
२०. घं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं घं
२१. ङं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ङं
२२. चं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं चं
२३. छं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं छं
२४. जं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं जं
२५. झं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं झं
२६. ञं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ञं
२७. टं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं टं
२८. ठं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ठं
२९. डं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं डं
३०. ढं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ढं
३१. णं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं णं
३२. तं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं तं
३३. थं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं थं
३४. दं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं दं
३५. धं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं धं
३६. नं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं नं
३७. पं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं पं
३८. फं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं फं
३९. बं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं बं
४०. भं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं भं
४१. मं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं मं
४२. यं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं यं
४३. रं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं रं
४४. लं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं लं
४५. वं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं वं
४६. शं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं शं
४७. षं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं षं
४८. सं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं सं
४९. हं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं हं
५०. ळं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं ळं

क्ष

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं अं
१०२. कं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं कं
१०३. चं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं चं
१०४. टं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं टं
१०५. तं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं तं
१०६. पं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं पं
१०७. यं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं यं
१०८. शं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत-मधु व शर्करा से होम करे।

दशाक्षर-'श्रीरुद्र-सदाशिव'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-चिन्तन-'ब्रह्माण्ड' और 'पिण्ड'-दोनों का शासन करनेवाले एक-मात्र **श्रीरुद्र-सदाशिव** हैं। आपका चिन्तन करने से **स्व-स्वरूप का ज्ञान** तो होता ही है, साथ ही **बन्धन-रूपी 'माया'**-जनित सभी **बाधाएँ** भी नष्ट हो जाती हैं।

विनियोग-**ॐ अस्य श्रीरुद्र-शिव-दशाक्षर मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः। विराट् छन्दः। श्रीरुद्र-सदाशिव देवता। ममाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीब्रह्मणे-ऋषये नमः। मुखे विराट्-छन्दसे नमः। हृदये श्रीरुद्र-सदा-शिवाय देवतायै नमः। **ममाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।**

कर-न्यास-**ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमः तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। रुद्राय अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ नमो भगवते रुद्राय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। रुद्राय करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।**

षडङ्ग-न्यास-**ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। रुद्राय कवचाय हुम्। ॐ नमो भगवते रुद्राय नेत्र-त्रयाय वौषट्। रुद्राय अस्त्राय फट्।**

ध्यान-

आकीर्णं दिव्य-भोगैरमर-दिति-सुतैरर्चितं शैल-कन्या-
देहार्धं धारयन्तं स्फटिक-मणि-निभं व्याघ्र-चर्मोत्तरीयम्।।
द्वैपीं कृत्तिं वसानं हिम-किरण-कला-शेखरं नील-कण्ठं।
हृष्टं व्याप्तं कलाभिर्धृत-कपिल-जटं भावयेऽहं महेशं।।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीरुद्र-सदाशिव-देवतायै समर्पयामि नमः।

मन्त्र- **ॐ नमो भगवते रुद्राय** (१० अक्षर)। **वर्ण-माला** में इस मन्त्र का जप पीछे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए। साथ ही, ''**ॐ 'ह-स-क-ल-ह्रीं', नमो 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं', भगवते 'स-क-ल-ह्रीं' रुद्राय**'' इस प्रकार '**त्रि-कूटों**' से सम्पुटित मन्त्र का यथा-शक्ति जप भी करना चाहिए।

'चण्डी'-पुस्तक-माला के कुछ उपयोगी अङ्क

➢ मन्त्र-कोष	२००/-
➢ दश महा-विद्या-साधना (५ पुस्तकें)	१५०/-
➢ मन्त्रात्मक सप्तशती	५००/-
➢ सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती)	२५०/-
➢ अद्भुत सप्तशती	१००/-
➢ हवनात्मक अद्भुत सप्तशती	३५/-
➢ साधना-रहस्य	४०/-
➢ दीक्षा-प्रकाश	३५/-
➢ श्रीकाली-कल्पतरु	७०/-
➢ श्रीतारा-कल्पतरु	३५/-
➢ श्रीबाला-कल्पतरु	३५/-
➢ श्रीशिव-शक्ति-अङ्क	४०/-
➢ श्रीबगला-साधना	३५/-
➢ श्रीरमा-पारायण	३५/-
➢ श्रीदुर्गा-कल्पतरु	१५/-
➢ नव-ग्रह-साधना	५०/-
➢ कुण्डलिनी-साधना	२५/-
➢ दीपावली-विशेषाङ्क	३०/-
➢ नवरात्र-कल्पतरु	५०/-
➢ शत-चण्डी-विधान	२५/-
➢ अघोर-पन्थ का निरूपण	२५/-
➢ श्रीमहा-गणपति-साधना	३५/-
➢ साधक का संवाद	२५/-
➢ धर्म-मार्ग पर	२५/-
➢ श्रीवैद्यनाथ-धाम-माहात्म्य	३०/-

प्राप्ति-स्थान

श्रीचण्डी-धाम

अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-०६ ☆ फोन ०५३२-२५०२७८३, ९२३५९१००७१

रजि० सं० ३२९८१/५७

शास्त्र कहते हैं-

'नाम'-स्मरण

"....जो सतत 'श्रीदुर्गा-नाम' का जप करता है,
वह जीवन का परम लक्ष्य-
'मोक्ष' प्राप्त करता है।...."

"....चलते-फिरते, सोते-जागते, उठते-
बैठते तथा आँखे खोले हुए और
मूँदे हुए, पवित्रता में अथवा
अपवित्रता में-सर्वत्र भगवान्
सदाशिव का चिन्तन करना चाहिए।...."

"....'विद्या' के आरम्भ करते समय,
'विवाह' के समय,
'घर में प्रवेश' करते समय तथा
'घर से बाहर' जाते समय,
'युद्ध' के समय,
'सङ्कट' के समय,
जो 'भगवान् श्रीगणेश का स्मरण' करता है,
उसे विघ्नों का सामना नहीं करना पड़ता।...."

प्रकाशक : श्रीऋतशील शर्मा, श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-६ ☎ ०९२३५९१००७१